चन्दामामा
फरवरी १९७२
E.O.2 PAISE
90 P

Photo by: SURAJ N. SHARMA

रसीली...प्यारी...मज़ेदार.
सिर्फ़ २५ पैसे!
PARLE
POPPINS
FRUITY SWEETS
नयी पारले
पॉपिन्स
फलों के स्वादवाली गोलियां
अनानास, नींबू, नारंगी, मोसंबी व रास्पबेरी—
पांच फलों के स्वादवाली १३ स्वादिष्ट गोलियां—
हरेक शानदार, कम कीमत के पैक में।
पॉपिन्सका स्वाद चखो, पांच फलों का मज़ा लो
everest/122b/PP Hin

Vision 711 Hin

चन्दामामा

संस्थापक : नागिरेड्डी
संचालक : 'चक्रपाणी'

इस महीने की बेताल कथा के द्वारा हमें यह विदित होता है कि प्रेम करने के लिए स्वेच्छा की आवश्यकता है। बिना स्वेच्छा के यदि कोई व्यक्ति अपने प्रेम का त्याग करता है तो वह वास्तव में त्याग नहीं कहलाता।

इस अंक से "अबू कीर-अबू सीर" नामक एक लंबी अरब कथा शुरू कर रहे हैं। आशा है, यह रोचक कथा पाठकों का अच्छा मनोरंजन करेगी! "चालाक चोर" के जरिये हमें ईमानदारी का पता चलता है।

वर्ष : २४ फ़रवरी १९७२ अंक : ६

अमर वाणी

अयं निजः परोवेति गणना लघुचेतसाम्,
उदार चरितानाम् तु वसुधैव कुटुंबकम् । ॥ १ ॥

[संकुचित स्वभाव वाला व्यक्ति अपने और पराये का भाव रखता है, पर उदार व्यक्ति के लिए सारा संसार उसका परिवार होता है।]

प्रत्यहं प्रत्यवेक्षेत नरश्चरित मात्मनः,
किं नु मे पशुभि स्तुल्यं, किं नु सत्पुरुषै रिति ॥ २ ॥

[प्रत्येक मनुष्य को रोज़ यह आत्म-विमर्श करना चाहिये कि मेरा व्यवहार पशुतुल्य है या उत्तम मानव के व्यवहार जैसा है?]

सद्भि रेव सहासीत, सद्भिः कुर्वीत संगतिम्,
सद्भि विवादं मैत्री च; नासद्भिः किंचिदाचरेत् ॥ ३ ॥

[अच्छे लोगों के साथ उठो, बैठो, मैत्री करो, झगड़ा करो, पर दुष्ट लोगों से दूर रहो।]

गुणं पृच्छस्व, मा रूपं, शीलं पृच्छस्व, मा कुलम्
सिद्धिं पृच्छस्व, मा विद्यां; भोगं पृच्छस्व, मा धनम् ॥ ४ ॥

[गुण पूछो, पर सौंदर्य न पूछो। शील पूछो, पर जाति न पूछो; जो साध लिया, उसे पूछो, पर शिक्षा न पूछो; भोग पूछो, मगर धन न पूछो।]

एक गाँव में शिवराम नामक एक आयुर्वेदी वैद्य था। कठिन से कठिन बीमारी को भी वह दूर करता था। इसलिए दूर दूर के गाँवों से भी मरीज़ आकर उसके यहाँ से दवा ले जाते थे, इलाज कराते थे।

शिवराम के गाँव में ही कामशास्त्री नामक एक आदमी था। उसनें देखा कि शिवराम को मरीज़ देवता के समान मानते हें और शिवराम भी मौत के मुँह में जाने वाले मरीज़ों को भी बचाता है। इसलिए कामशास्त्री के मन में भी यह इच्छा पैदा हुई कि वह भी एक वैद्य बने और यश कमावे।

इसलिए एक दिन कामशास्त्री ने शिवराम के पास जाकर प्रणाम करके बिनती की—"साहब, मैं भी वैद्य विद्या सीखना चाहता हूँ। मुझे अपना चेला बनाकर यह विद्या सिखाने की कृपा करें।"

इस पर प्रसन्न हो कामशास्त्री ने कहा— "मैं भी बूढ़ा होता जा रहा हूँ, बेटा! यह सोचकर मैं चिंता में पड़ा हुआ हूँ कि मेरे बाद मरीज़ों का कौन इलाज करेगा। भगवान ने ही ख़ुद तुम्हें मेरे पास भेजा है।" इन शब्दों के साथ शिवराम ने कामशास्त्री को अपना शिष्य बना लिया।

उस दिन से लेकर कामशास्त्री शिवराम के घर पर ही रहने लगा।

शिवराम मरीज़ों के लिए आवश्यक सारी दवाएँ ख़ुद तैयार करता था, उस वक़्त कामशास्त्री सिर्फ़ मदद देता था। धीरे धीरे शिवराम कामशास्त्री को वैद्य-विद्या के सारे रहस्य बताते गया।

एक दिन शिवराम कामशास्त्री को साथ ले एक मरीज़ को देखने गया। शिवराम को देखते ही खाट पर से मरीज़ उठ बैठा।

सवितारानी गोयल

शिवराम ने मरीज़ की नाड़ी देखी, और पूछा–"तुम मेरे कहे अनुसार परहेजी न रखोगे तो दवा कैसे काम देगी ? तुम अपनी बीमारी दूर करना चाहते हो या नहीं?"

"वैद्यजी, मैं आपकी दी हुई दवा नियमित रूप से लेता हूँ। आपके कहे मुताबिक़ परहेजी भी रखता हूँ।" मरीज़ ने जवाब दिया।

शिवराम ने डांटते स्वर में पूछा–"क्या मैंने तुमको ईख खाने सें मना न कर दिया था ? तुमने क्यों खाया ?"

"मैंने गलती की, जीभ कडुआ मालूम होती थी, इसलिए ईख के दो टुकड़े खा लिया।" मरीज़ ने मान लिया।

आइंदा ऐसी चीज़ें खाने से मना करके मरीज़ को दवा दे शिवराम घर चला आया।

गुरुजी की अक्लमंदी पर कामशास्त्री को आश्चर्य हुआ। उसने शिवराम से पूछा–"गुरुजी, क्या नाड़ी देखने से यह पता चलता है कि मरीज़ ने क्या खाया है?"

शिवराम ने हंसकर कहा–"अरे कामशास्त्री, वैद्य को थोड़ा दर्प दिखाना पड़ता है। इस के लिए थोड़ा अनुभव भी चाहिये। जब हम मरीज़ के घर गये, तब हमें मरीज़ के खाट के नीचे ईख की सीठी दिखाई दी। इस का मतलब है कि मरीज़ ने ईख खाया है। ऐसी बातें सिर्फ़ पढ़ने से मालूम नहीं होतीं, समझें!"

कामशास्त्री को असली रहस्य का पता लगा। दूसरे दिन शिवराम ने एक दूसरे मरीज़ के घर दवा दे आने के लिए कामशास्त्री को भेजा। कामशास्त्री ने मरीज़ के घर जाकर देखा, वह पुआल के ढेर के पास खाट लगाये बैठा है।

कामशास्त्री ने मरीज़ की नाड़ी को जांचने का अभिनय करते पूछा–"अजी, तुम बीमारी दूर करना चाहते हो या नहीं? पुआल खाने से बीमारी कैसे दूर होगी?"

मरीज़ को गुस्सा आया और उसने लाठी लेकर कामशास्त्री को पीटा।

इसके बाद जब यह खबर शिवराम को मालूम हुई, तब कामशास्त्री को खरी-खोटी सुनाकर अपने घर से भेज दिया।
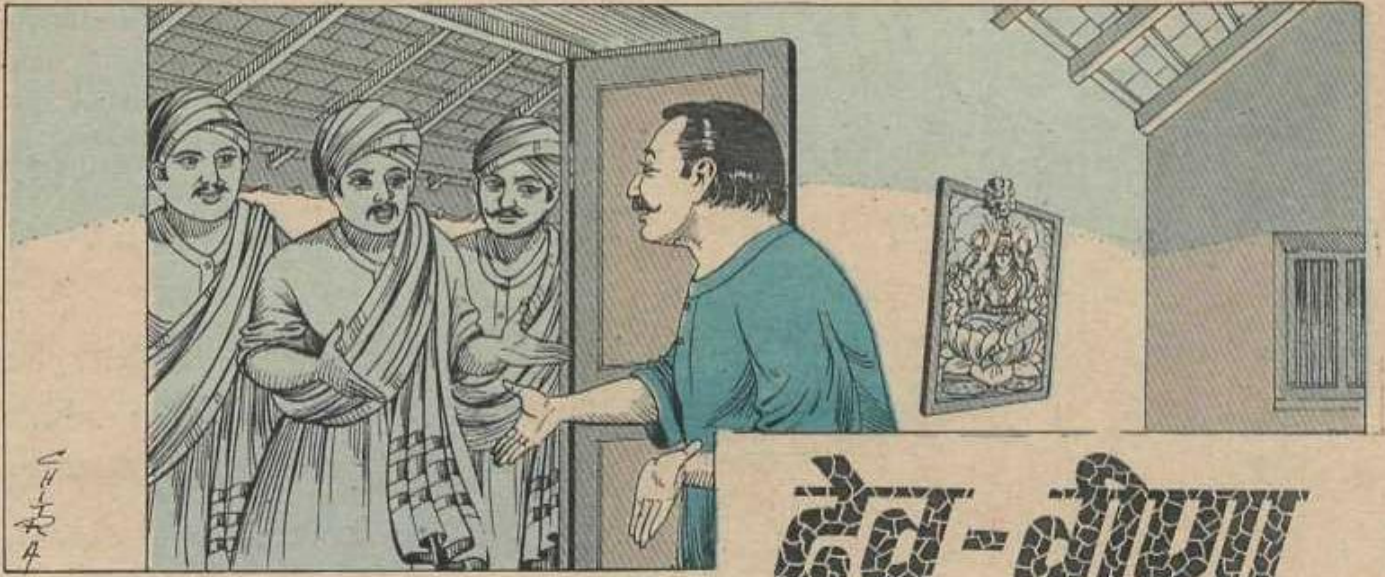
दैव-वीणा

एक गाँव में शारभशास्त्री नामक एक गृहस्थ था। संगीत के नाम पर वह अपनी जान देता था। कोई काम-वाम करते वक़्त भी वह गाया करता था। मगर जब भी वह गाता, उसकी पत्नी ठठा कर हंस पड़ती। अपनी पत्नी को हंसते देख शरभशास्त्री को बड़ा दुख होता था। इसलिए वह अपनी पत्नी के घर में रहते वक़्त गाता न था।

एक दिन शरभशास्त्री की पत्नी अपने मायके चली गयी। शाम के वक़्त शरभशास्त्री ने रसोई बनाना शुरू किया और ज़ोर-शोर से गाने लगा। उसी वक़्त किसी ने दर्वाज़ा खटखटाया, शरभशास्त्री ने दर्वाज़ा खोलकर देखा, सामने तीन मुसाफ़िर खड़े हैं। वे थके मालूम होते थे।

मुसाफ़िरों में से एक ने कहा–"भाई, हम लोग दूर की यात्रा करके थके हुए हैं। हमें बड़ी भूख भी लगी है। आज रात को हमें थोड़ा खाना खिलाओगे तो सवेरे हम अपने रास्ते चले जायेंगे।"

"यह कौन बड़ी बात है? अन्दर आ जाइये। दुर्भाग्य से आज मेरी पत्नी घर में नहीं है। मैं ही खाना बना कर खिलाऊँगा। आप लोग उसी को पक्वान्न समझ कर तृप्त हो जाइये। मेरी पत्नी होती सचमुच आप लोगों को पक्वान्न खिला देती।" शरभशास्त्री ने कहा।

शरभशास्त्री खाना बना रहा था, मुसाफ़िर हाथ-मुँह धोकर खाने आ बैठे।

उन मुसाफ़िरों में से एक ने शास्त्री से कहा–"आप कुछ गा रहे थे। हमारे आने से आपके संगीत में विघ्न आ पड़ा, गाइये तो, हम भी सुनकर आनंद उठायेंगे।"

शरभशास्त्री को यह सोचकर लज्जा मालूम हुई कि जो संगीत सुनकर उसकी

जगन्नाथाचार्य

पत्नी हँस पड़ती है, वह मुसाफ़िरों को पसंद आया है।

"यूँ ही समय बिताने के लिए गाया करता हूँ। यह दूसरों के सुनने लायक़ नहीं है।" शरभशास्त्री ने कहा।

"आप यह क्या कहते हैं? बहुत अच्छा गाते हैं। एक-दो गाने सुनाइये तो सही।" मुसाफ़िरों ने कहा।

इस पर शरभशास्त्री ने एक-दो नहीं बल्कि कई गीत गाये। रसोई के बनने तक वह गाता ही रहा।

रसोई के बनने पर चारों ने बैठ कर खाना खाया।

"हम सोच रहे थे कि यह जून हम क्या खावें? आप की मेहर्बानी से हमने पेट भर खाना खाया। आप की कोई ऐसी इच्छा हो तो बताइये जिस की पूर्ति न होती हो! संभव हो तो हम उसे पूरा करेंगे।" मुसाफ़िरों ने कहा।

शरभशास्त्री ने सकुचाते हुए कहा–"कई दिनों से मेरी एक इच्छा है। वह यह कि संगीत न जानने वाला भी बजा दे तो मधुर ध्वनि निकलने वाली वीणा हो तो क्या ही अच्छा हो! मगर ऐसी वीणा कहाँ मिल सकती है?" शास्त्री ने गहरी सांस ली।

"उस दीवार पर टंगी वीणा क्या आप ही की है?" मुसाफ़िरों ने पूछा।

शरभशास्त्री ने मुड़कर दीवार की ओर देखा तो सचमुच वहाँ एक वीणा टंगी हुई
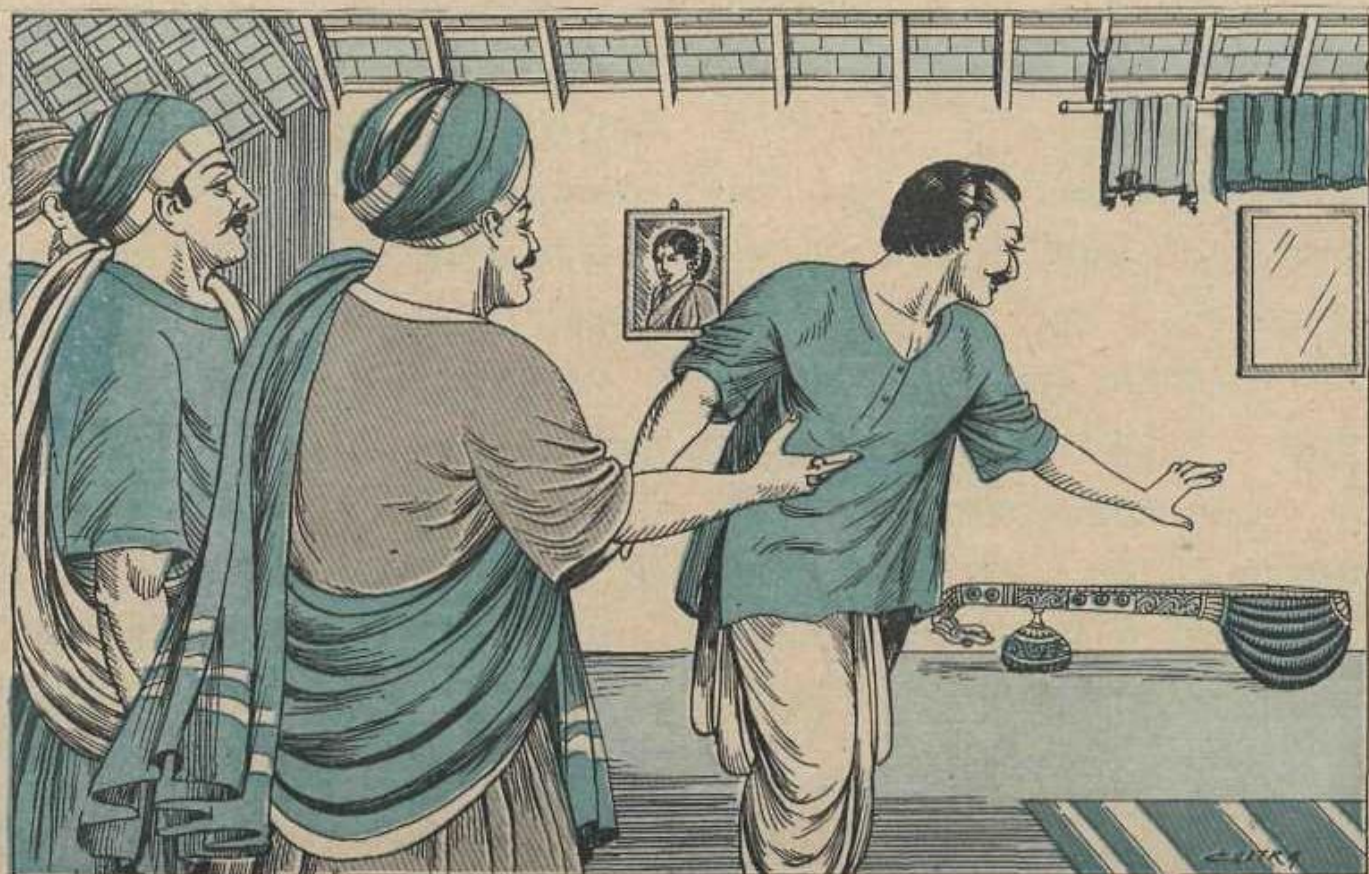
थी। शरभशास्त्री ने वीणा हाथ में लेकर उसे अलट-पुलट कर देखा। वह साधारण वीणा न थी। उस पर बढ़िया नक्काशी की गयी थी। शरभशास्त्री ने उसके तारों को झंकृत किया तो मधुर ओंकार की ध्वनि निकली।

शास्त्री जब वीणा की तंत्रियों को झंकृत करने में निमग्न था, तभी मुसाफ़िर चले गये। शास्त्री नें उनको जाते न देखा था। उसने वीणा बजाना शुरू किया। वह नव रसों में से जो रस चाहता, वही वीणा में ध्वनित होने लगा।

शरभशास्त्री वीणा-वादन में निमग्न था, तभी उसकी पत्नी मायके से लौट आयी। उसके पीछे अड़ोस-पड़ोस के लोग भी आ पहुँचे। शास्त्री का वीणा वादन सुनकर उसकी पत्नी इस बार हंसी नहीं। सब लोग तन्मय हो उस नाद को सुनते रहें।

शरभशास्त्री ने गाँव वालों को बताया कि उसे वह वीणा कैसे प्राप्त हुई।

"वे मुसाफ़िर साधारण नहीं, कोई देवता हैं। यह तो देव-वीणा है। तुम भक्ति के साथ इसे अपने पास रखो।" गाँव वालों ने समझाया।

उस दिन से लेकर शरभशास्त्री जब भी गाँव वाले वीणा बजाने का आग्रह करते, बजा कर सुनाया करता था।

कुछ दिन बाद गोविंद दास नामक एक व्यक्ति शरभशास्त्री के घर आया। गोविंद दास भी एक तरह के संगीत का
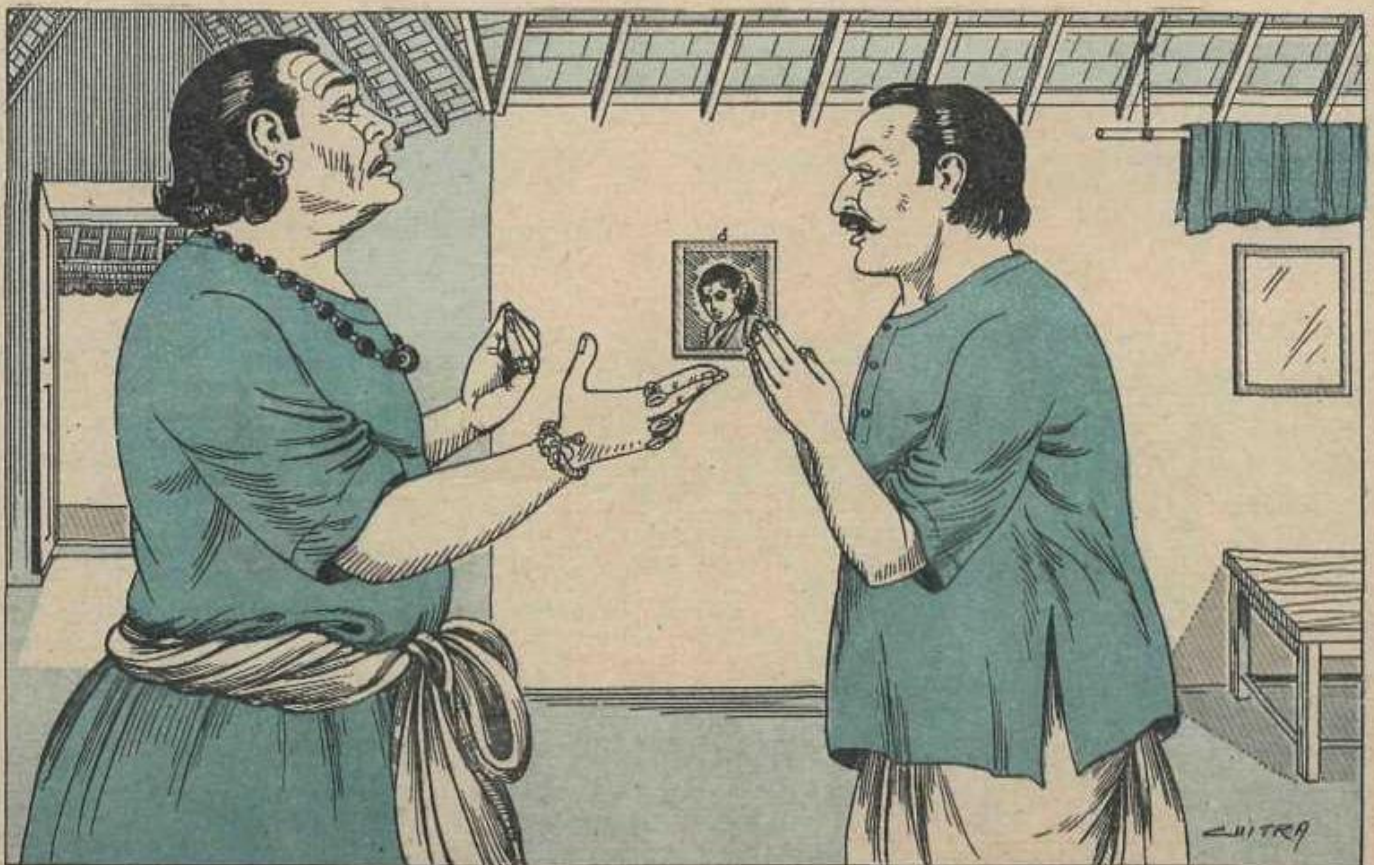
विद्वान था। वह हमेशा दूसरों के सामने शारभशास्त्री के संगीत की आलोचना करता और कहता–"शरभशास्त्री क्या जाने कि संगीत किस चिड़िया का नाम है। वह यों ही कुछ गाता है, उस में न राग होता है न ताल ही। स्वरों का ज्ञान तो उसे है ही नहीं।" इस वजह से शरभशास्त्री गोविंद दास से मन ही मन जलता था।

"आप मेरे घर कैसे पधारे?" शरभशास्त्री ने गोविंद दास से पूछा।

"बात कुछ नहीं, सब कोई तुम्हारी प्रशंसा कर रहे थे, इस लिए तुम्हारा संगीत सुनने आया हूँ।" शरभशास्त्री ने कहा।

"बैठिये, मैं अभी सुनाता हूँ।" इसके बाद शरभशास्त्री ने वीणा लेकर करुण रस प्रधान गीतों का आलाप किया।

जल्द ही गोविंद दास की आँखों से आँसू निकले। धीरे धीरे उस का दुख उमड़ता ही गया।

"शरभशास्त्री जी, अपना संगीत बन्द कर दो।" गोविंद दास चिल्ला पड़ा, पर शरभशास्त्री गाता और बजाता ही गया, अखिर गोविंद दास बेहोश हो गिर पड़ा।

शरभशास्त्री वीणा बजाना बन्द कर गोविंद दास के पास आया। उसके मूँह पर पानी छिड़क कर जसे होश में लाया। गोविंद दास अपने पैर घसीटते घर चला गया।

असके चले जाने पर शरभशास्त्री ने वीणा पर उत्सावर्द्धक आलाप करना चाहा, पर वीणा मूक थी, सब अप स्वर निकलने लगे।

दूसरे दिन सवेरे उठकर शरभशास्त्री ने देखा, वीणा गायब थी। सबने पूछा, 'वीणा कहाँ?'

"वह देव-वीणा थी। गोविंद दास को सताने के लिए मैंने उस वीणा का उपयोग किया, उसके प्रति अन्याय किया। इसलिए वह जैसे प्राप्त हुई, वैसे गायब भी हो गयी।" शरभशास्त्री ने पछताते हुए उत्तर दिया।
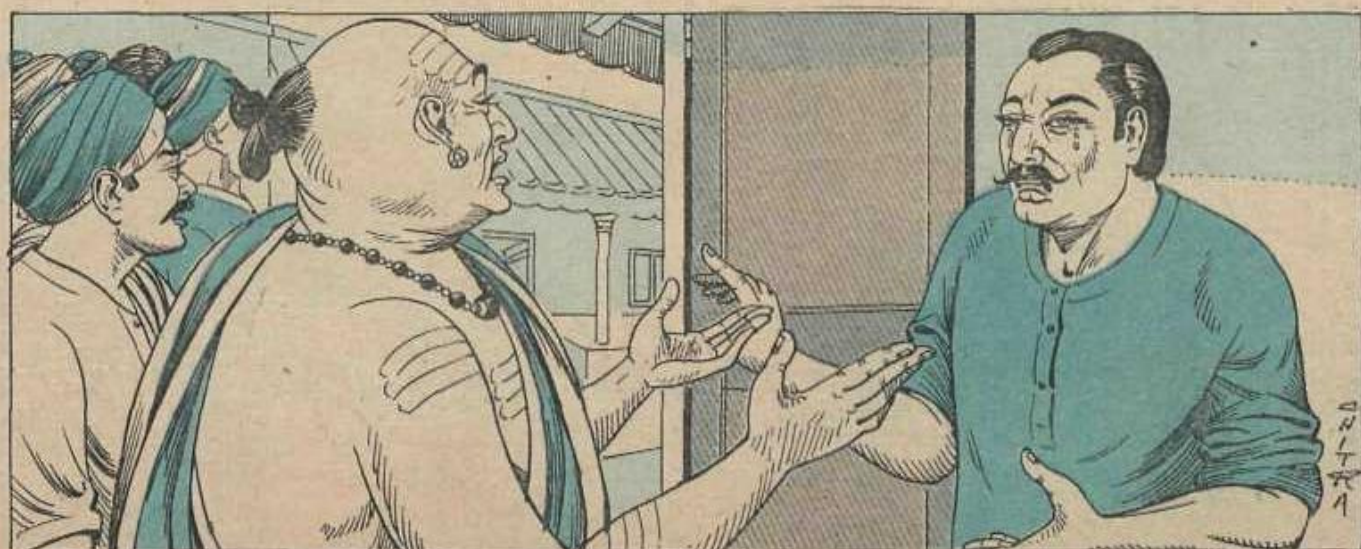
शिलारथ

[१६]

[विघ्नेश्वर पुजारी ने खड्गवर्मा तथा जीवदत्त को एक गुफ़ा में बन्दी बनाया। जंगली योद्धाओं के हमले से डरकर राजा नित्यानंद भाग खड़ा हुआ। खड्गवर्मा और जीवदत्त ने पहरेदारों को चकमा देकर गुफ़ा में बन्दी बनाया, गुफ़ा के द्वार को बन्दकर पहाड़ की ओर चल पड़े।]

पहाड़ पर से खड्गवर्मा और जीवदत्त ने देखा कि विघ्नेश्वर पुजारी का राक्षस हाथी और जंगली योद्धा आनंदपुर की ओर बढ़े चले जा रहे हैं।

"जीवदत्त, हमें उस दुष्ट पुजारी का वध करके राजा नित्यानंद की रक्षा करनी है। चलो!" खड्गवर्मा ने सुझाया।

इस पर जीवदत्त ने हँसकर कहा– "राजा नित्यानंद अव्वल दर्जे का कायर है। ऐसे राजा को आज हम भले ही विघ्नेश्वर पुजारी के चंगुल से बचावे, पर कल कोई उसे आसानी से हरा देगा! हम नाहक़ इस झंझट में क्यों पड़े?"

"क्योंकि उस कमबख़्त पुजारी ने धोखे से हमें बन्दी बनाया और हमें तंग किया। इसका बदला हमें चुकाना ही होगा।" खड्गवर्मा ने कहा। "तब तो चलो, देरी क्यों?" ये शब्द कहते जीवदत्त ने एक
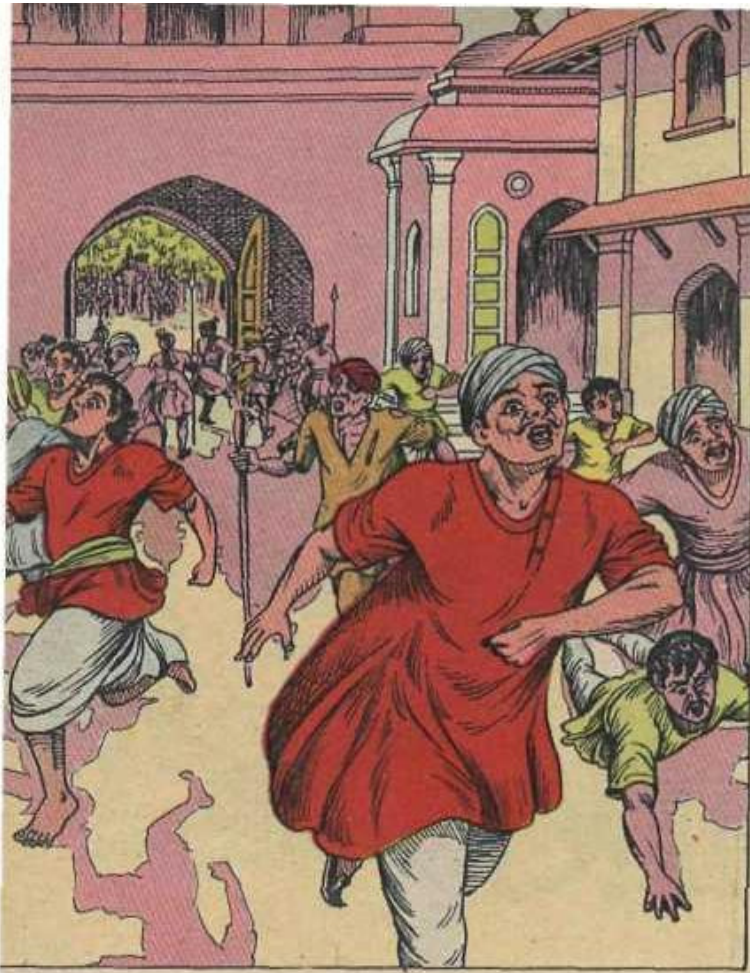
बार और पुजारी के दल की ओर देखा और पहाड़ से उतरने लगा। खड्गवर्मा ने उसका अनुसरण किया।

"हमें इस दल की आँख बचाकर थोड़ी देर पहले ही आनंदपुर पहुँच जाना उत्तम होगा। तब हम पहले ही राजा को चेतावनी दे विघ्नेश्वर पुजारी का सामना करने के लिए आवश्यक प्रयत्न कर सकते हैं।" खड्गवर्मा ने सलाह दी।

"राजा नित्यानंद की हिम्मत पर मेरा तो ज़रा भी विश्वास नहीं है। पुजारी को राक्षस हाथी पर आते देख वह दूसरी ओर क़िले की दीवार फांदकर भाग जायगा। इसलिए हमें पहले इस हाथी का वध करने का उपाय सोचना चाहिए।" जीवदत्त ने कहा।

"मुझे तो वह कोई यंत्रवाला हाथी मालूम होता है! तुम्हारा क्या विचार है?" खड्गवर्मा ने पूछा।

"हो सकता है कि वह यंत्र का बना हाथी हो! मगर जब तक हम उसका नाश नहीं करेंगे, तब तक राजा नित्यानंद और उसके सिपाहियों की हिम्मत न बढ़ेगी। वरना वे लोग इन जंगलियों को राजधानी सौंपकर तुरंत जंगलों में भाग जायेंगे।" जीवदत्त ने समझाया।

दोनों मित्र इस प्रकार वार्तालाप करते हुए विघ्नेश्वर पुजारी के दल के पीछे आनंदपुर की ओर थोड़ी दूर चले। धीरे धीरे पुजारी का हाथी नगर के प्राकार के निकट पहुँचा। उस हाथी को देख नगर के द्वार के पास रहनेवाले लोग हाहाकार करते नगर के भीतर भागने लगे। नगर के द्वार खुले थे।

"खड्गवर्मा, पुजारी की आँख बचाकर हमें नगर के भीतर प्रवेश करने का यही अच्छा मौक़ा है। हम इस रास्ते को छोड़ उन पेड़ों के पीछे पहुँच जायेंगे। वहाँ से लोगों की भीड़ में मिलकर नगर में घुस जायेंगे।" जीवदत्त ने कहा।

तुरंत वे दोनों नगर के प्राकार के समीप के वृक्षों की ओर दौड़ पड़े, तब

भीड़ में मिलकर नगर का द्वार पार करके भीतर पहुँच गये। इसी समय राक्षस हाथी नगरद्वार के समीप आ पहुँचा। द्वार की रक्षा करनेवाले कुछ सिपाही भाग गये, लेकिन बचे हुए सिपाहियों ने झट नग़र के द्वार को बंद किया।

नगर के भीतर बड़ी हलचल मच गयी। कुछ लोग "राक्षस हाथी!" "विघ्नेश्वर पुजारी" चिल्लाते हुए गली-कूचों में भागने लगे। यह शोरगुल सुनकर राजा नित्यानंद अपने महल से बाहर आया। उसने देखा कि कुछ लोग नगर की गलियों में भाग रहे हैं, नगर का द्वार बंद है और द्वार के पीछे खड़े हो पहरेदार सोच रहे हैं कि क्या करना होगा!

राजा नित्यानंद ने अपने एक अंगरक्षक को पुकारा। उसने सारी हालत राजा को कह सुनायी। यह समाचार सुनते ही राजा का शरीर पसीने से तर-बतर हो गया। वह सोचने लगा, पुजारी का हाथी नगर में प्रवेश करने जा रहा है। किसी भी प्रकार के अस्त्र-शस्त्र से उस राक्षस हाथी को वश में करना नामुमक़िन है।

"सुनो, तुम शीघ्र सेनापति के पास जाकर कह दो कि वह नगर के द्वार के पास सैनिकों को इकट्ठा कर दे। इस बात का ख़्याल रखो कि हाथी के द्वारा नगर

के द्वार को तोड़ने के पहले ही सैनिक वहाँ पर पहुँच जांय! मैं भी अभी आ जाता हूँ।" राजा नित्यानंद ने कहा।

अंगरक्षक चला गया, तभी नगर द्वार के पास खड़ाखड़ की आवाज होने लगी। विघ्नेश्वर पुजारी का राक्षस हाथी द्वार पर अपने माथे का प्रहार करने लगा। उसके साथ जंगली योद्धा शोरगुल करते पत्थरों से द्वार को तोड़ने का प्रयत्न करने लगे।

भीड़ में से खड्गवर्मा और जीवदत्त ने देखा कि राजमहल के पास राजा अपने अंगरक्षक से बात कर रहा है। वे दोनों राजा के पास जाकर नगर की रक्षा करने के लिए कोई उपाय बताना चाहते थे,
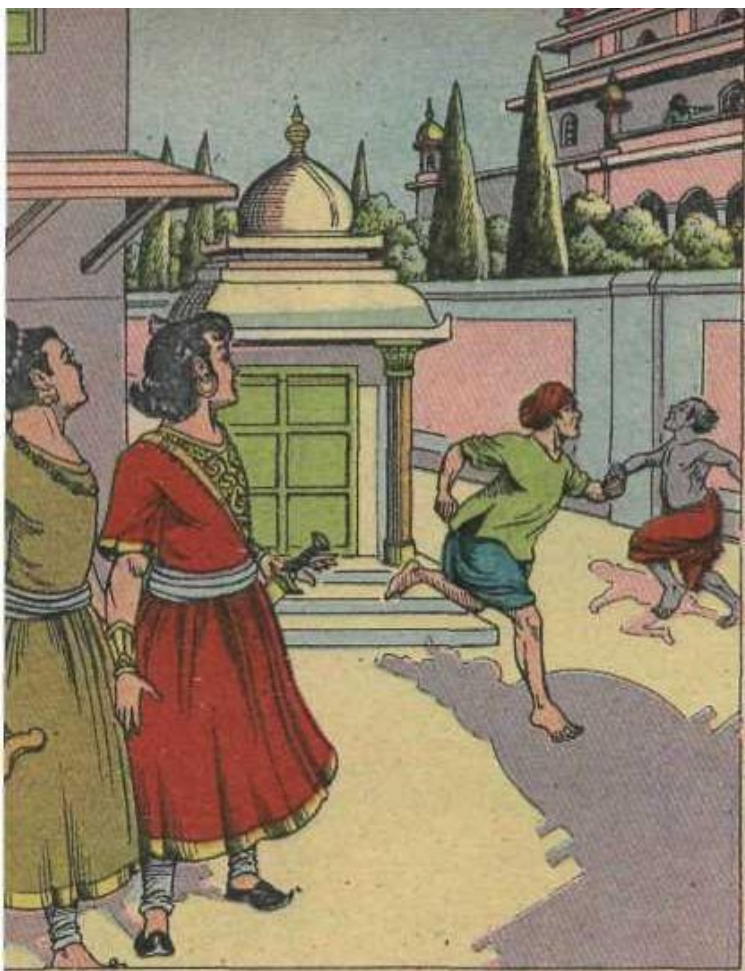
मगर नगरद्वार की ओर से भयंकर ध्वनियाँ आने लगीं।

"खड्गवर्मा, इस वक़्त राजा से भेंट करना संभव नहीं है। आध घड़ी के अंदर पुजारी द्वार को तोड़ नगर में प्रवेश कर सकता है। इसलिए हम ही कोई उपाय करके पुजारी और उसके हाथी का अंत कर देंगे।" जीवदत्त ने सुझाया।

"मेरा भी यही विचार है। राजा का चाहे कुछ भी हो जाय, मगर हम पुजारी का खातमा करके अपने रास्ते चले जायेंगे।" खड्गवर्मा ने कहा।

"पुजारी और उसके हाथी का वध करने के लिए हमें कुछ साहसी युवकों की मदद चाहिए। इस बीच हमें यह भी ख़्याल रखना होगा कि जंगली युवक नगर में घुसकर भोली-भाली जनता का वध न कर बैठे। क्योंकि पुजारी के वध के प्रयत्न में लगे रहने के बाद जनता की रक्षा की जिम्मेदारी भी हमारी हो जाती है। देखो, सैनिक आ रहे हैं। पीछे आनेवाले रथ में क्या राजा नित्यानंद तो नहीं है?" जीवदत्त ने पूछा।

"हाँ हाँ, रथ पर वही कायर है। वह राजा नहीं, राज है!" खड्गवर्मा ने खीझे हुए स्वर में कहा। तब तक सेनापति अपने सैनिकों के साथ नगर के द्वार पर आ पहुँचा। हाथी के प्रहार से द्वार में छेद हो गये थे, जिन से होकर जंगली योद्धा बाण और भाले भीतर की ओर फेंक रहे थे। सेनापति ने अपने सैनिकों को द्वार से थोड़ी दूर पर रोक दिया और उन्हें आदेश देने लगा कि यदि राक्षस हाथी भीतर घुस आवे तो कैसे उसका सामना करना चाहिए!

राजा नित्यानंद भी रथ पर आ पहुँचा और सैनिकों के पीछे अपने रथ को खड़ा करवा दिया। राजा की हालत पर खड्गवर्मा और जीवदत्त को बड़ी दया आयी। राजा के चेहरे पर घबराहट साफ़ झलक रही थी। उसके बाजू में एक और

व्यक्ति बैठा हुआ था। उसकी पोशाकों को देखने पर लगता था कि शायद वह मंत्री होगा।

"खड्गवर्मा, मैंने एक उपाय सोच रखा है। राजा से बात करने के लिए यही एक अच्छा मौक़ा है, चलो।" ये शब्द कहते जीवदत्त रथ के निकट पहुँचा और ज़ोर से पुकार उठा–"महाराज!"

जीवदत्त की पुकार सुनते ही राजा नित्यानंद उन दोनों क्षत्रिय युवकों की ओर देख चौंक पड़ा और कहा–"तुम लोग उस दुष्ट पुजारी के चंगुल से कैसे बच निकले?"

"महाराज! ये सारी बातें आपको फिर अवकाश के साथ समझायेंगे! पुजारी का हाथी यदि नगर में घुस आया तो आपके सैनिक भाग जायेंगे। तब जंगली लोग आपके नगर को लूट लेंगे। इसलिए हमें किसी युक्ति के साथ उस दुष्ट को हराना होगा। आप अगर मान जायेंगे तो मैं वह युक्ति बता सकता हूँ।" जीवदत्त ने कहा।

"हे महावीर! तुम्हारा कहना सत्य है। उस हाथी को देखने पर हमें वह काल से भी भयंकर मालूम होता है। कहो, वह युक्ति क्या है?" राजा नित्यानंद ने पूछा।
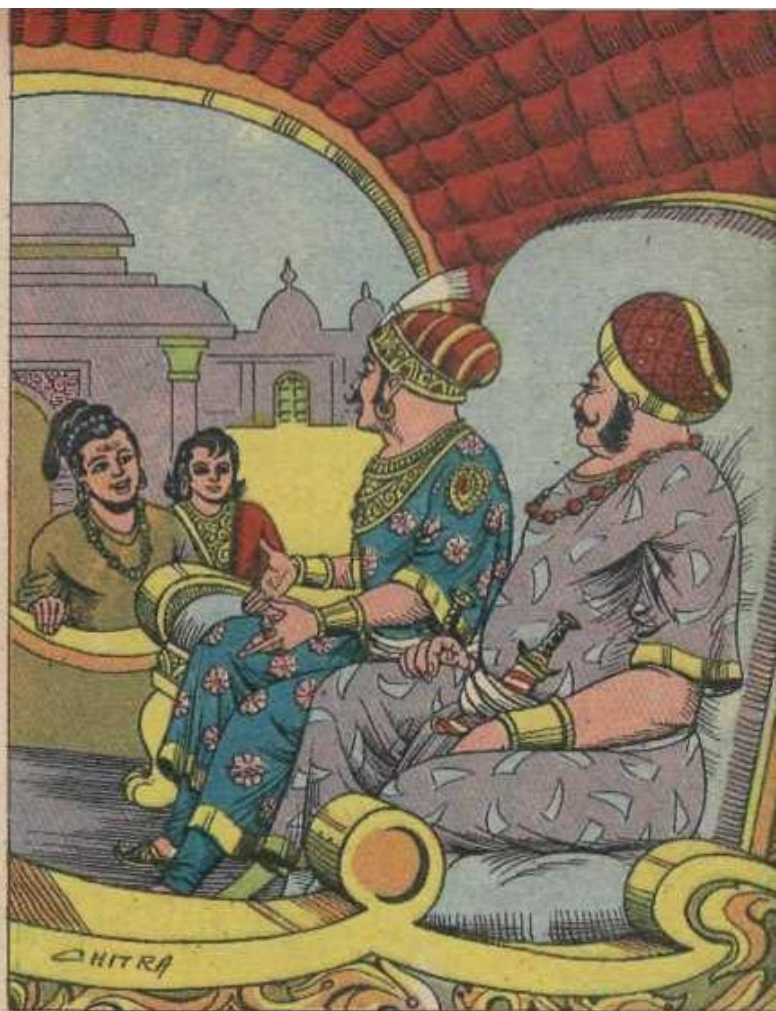
"यह युक्ति आपको एकांत में सुनाने की है। क्या मैं रथ पर आ जाऊँ?" जीवदत्त ने पूछा।

"बिना संकोच के आ सकते हो! ये हमारे महामंत्री हैं।" इन शब्दों के साथ राजा ने अपने बाज़ू में बैठे व्यक्ति की ओर संकेत किया।

"ये सब महा-महा व्यक्ति हैं। पर अव्वल दर्जे के कायर हैं।" खड़गवर्मा अपने मन में गुनगुना उठा।

जीवदत्त रथ पर चढ़कर बोला–"महाराज! आप इस रथ पर अपने उद्यान में जाइये। वहाँ पर कहीं लता-कुंजों में आप छिप जाइये। रथ को आप
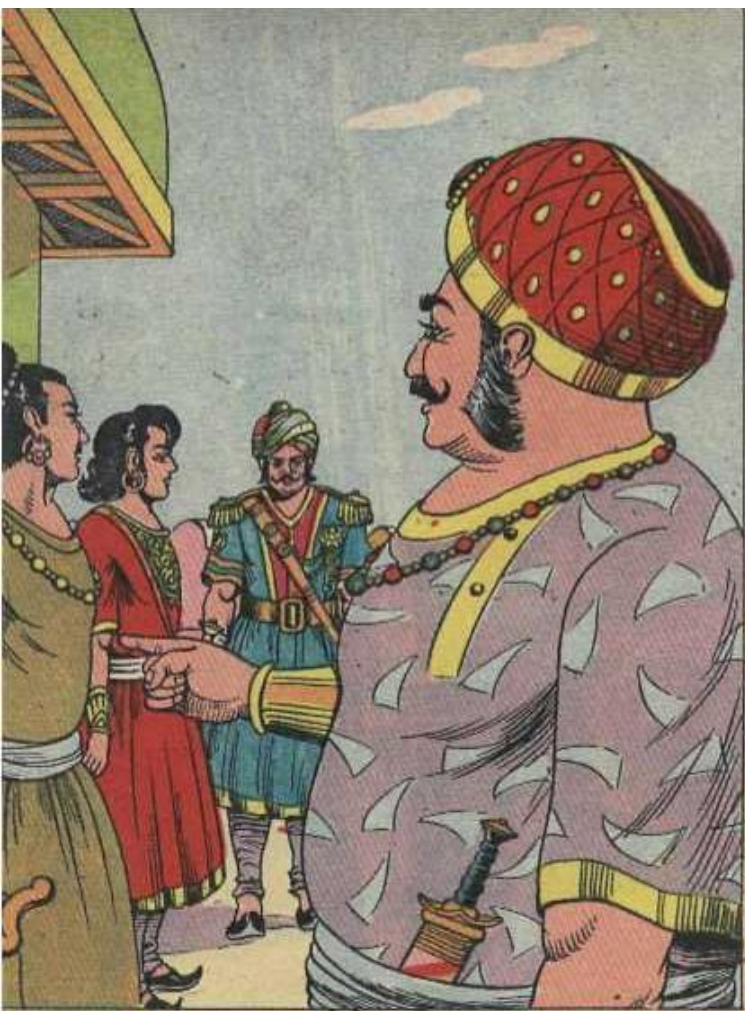
उद्यान वन के मार्ग में इस तरह खड़ा कर दीजिये, ताकि पुजारी बड़ी आसानी से विश्वास कर सके कि आप उद्यान में हैं। उस दुष्ट का अंत करने की जिम्मेदारी महा मंत्री तथा हम पर छोड़ दीजिये।"

नित्यानंद ने महामंत्री को इस तरह देखा मानों उसका विचार जानना चाहते हो। मंत्री ने सर हिलाकर कहा–"महाराज, मैंने इन दोनों क्षत्रिय युवकों के बल और पराक्रम का समाचार पहले ही सुन रखा है। अब इनकी बुद्धिमत्ता की बात हमें इसी बात से प्रकट ही जाती है कि ये लोग कपटी विघ्नेश्वर पुजारी के चंगुल से बचकर आ गये।"

"महाराज, आप उद्यान में जाइये। हम कोई चाल चलकर पुजारी को राक्षस हाथी के साथ उस ओर ले आयेंगे और रास्ते में ही उसका वध कर बैठेंगे। आपको डरने की कोई ज़रूरत नहीं।" जीवदत्त ने कहा।

इसके बाद मंत्री और जीवदत्त रथ से उतर पड़े। राजा ने सारथी को आदेश दिया कि वह रथ को उद्यान की ओर ले जावे। जीवदत्त ने थोड़ी देर तक मंत्री के साथ गुप्तमंत्रणा की और फिर ख़ड़गवर्मा को भी साथ ले नगर-द्वार की ओर चले। वहाँ पर मंत्री ने सेनापति को बुलाकर उसे खड़गवर्मा और जीवदत्ता का परिचय कराया और कहा–"ये दोनों क्षत्रिय युवक तुम से जो भी मदद मांगे, तुम तत्काल वह मदद दो। पुजारी का अंत करने के लिए इन दोनों युवकों ने बड़ी अच्छी युक्ति सोच रखी है। मैं यहीं रह कर पुजारी को उद्यान की ओर जाने के लिए प्रोत्साहित करूँगा।"

खड़गवर्मा और जीवदत्त ने सेनापति को अलग बुला ले जाकर उसे अपनी योजना का परिचय दिया। तुरंत वह सेनापति बीस सैनिकों को साथ ले तेल बेचनेवाली दूकानों की ओर बढ़ा। खड़गवर्मा और जीवदत्त भी उनके पीछे चले।

मंत्री ने द्वार के पास पहुँचकर पहरेदारों को आदेश दिया कि द्वार खोल दे। तब उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ। मगर मंत्री का आदेश उन्हें मानना था। इसलिए उन लोगों ने द्वार खोल दिया। उनके सामने राक्षस हाथी पर विघ्नेश्वर पुजारी दिखाई दिया।

पुजारी का हाथी द्वार पारकर भीतर आया। मंत्री ने उसके निकट जाकर पुजारी से कहा–"विघ्नेश्वर पुजारी, बिना किसी प्रकार की खून-खराबी के आप आनंदपुर का राजा होने जा रहे हैं। हमारे राजा को रात में सपने में विघ्नेश्वर ने दर्शन देकर आदेश दिया कि वे आपके सिर पर अपना किरीट पहना दे। इस वक़्त हमारे राजा उद्यान में अकेले हैं। आप बेरोकटोक वहाँ पर जा सकते हैं।"

"देखो, इसमें कोई धोखेबाजी तो नहीं है न?" पुजारी ने आश्चर्य के साथ पूछा।

"धोखा देना चाहते तो हम नगर का द्वार खोलकर आपको भीतर आने क्यों देते? आप खुद जानते हैं कि यदि आप एक बार अपने जंगली योद्धाओं के साथ नगर में प्रवेश करते हैं तो कोई भी आपका सामना नहीं कर सकता है! आप अपने अनुचरों को राजमहल के अहाते में विश्राम करने का आदेश दीजिये, वरना वे लोग नगर को लूट सकते हैं। इस वक़्त यह नगर आप ही का है।" मंत्री ने समझाया।
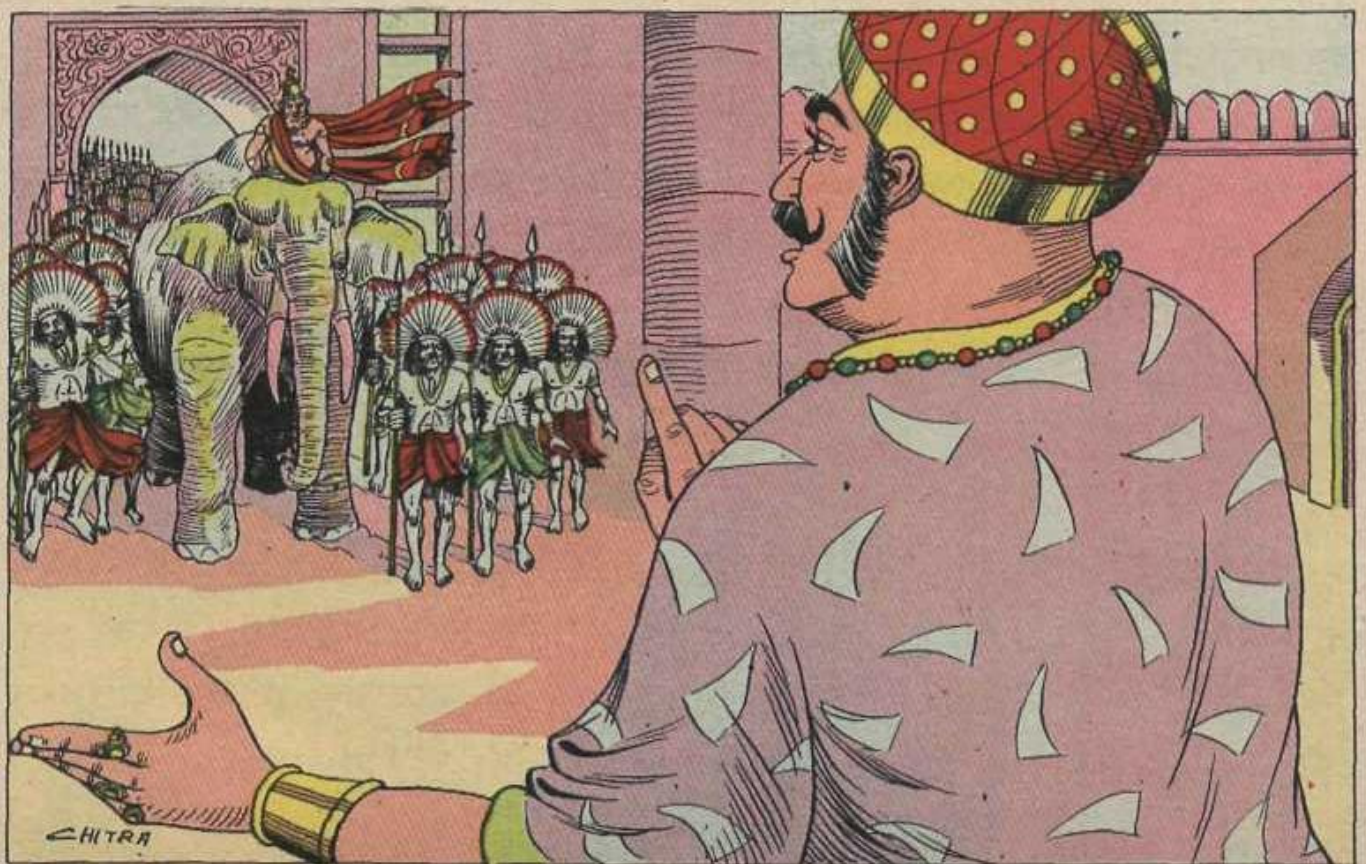
मंत्री की बातों पर विघ्नेश्वर पुजारी का विश्वास जम गया। उसने हाथी के मस्तक पर मुट्ठी से मारकर कहा–"चल, उद्यान की ओर चल!"

राक्षस हाथी चलने को हो हुआ, तब मंत्री ने दोनों हाथ उठाकर ऊँचे स्वर में कहा–"विघ्नेश्वर पुजारीजी! थोड़ा ठहर जाइये। पहले आप अपने अनुचरों को सामने दिखाई देनेवाले राजमहल के प्रांगण में भेज दीजिये। वहाँ पर उन्हें बढ़िया खाना और शराब का इंतज़ाम किया जायगा।"

पुजारी ने यह बात अपने अनुचरों से कही। वे लोग ख़ुशी में आये। चिल्लाते हुए राजमहल के प्रांगण की ओर दौड़ पड़े। उस प्रदेश में चारों तरफ़ एक ऊँची दीवार थी। उस दीवार का ऊपरी भाग दस-बारह फुट चौड़ा था और उस पर पहरेदारों के चलने लायक़ सुविधाएँ भी थीं।

जब सभी जंगली महल के प्रांगण में चले गये, तब मंत्री ने पुजारी से कहा–"विघ्नेश्वर पुजारीजी! आपकी अनुपस्थिति में आपके अनुचर नगर को लूटने का प्रयत्न कर सकते हैं। इसलिए उस प्रांगण के द्वार बंद करवाकर अपने विश्वासपात्र नौकरों का उस पर पहरा बिठा दीजिये।"

पुजारी तो इसी ख़्याल में था कि कब उसके सर पर किरीट पहना दिया जायगा और वह कब आनंदपुर की राजगद्दी पर बैठेगा, इसलिए मंत्री की बातों पर अधिक विचार किये बिना उसके कहे अनुसार कर दिया। इसके बाद राक्षस हाथी के मस्तक पर ज़ोर से दे मारा और हाँक दिया–"चलो, उद्यान की ओर चलो।"

मंत्री ने मन में सोचा कि यह मानवों की भाषा जाननेवाला कोई हाथी है। उसे लगा कि खड्गवर्मा और जीवदत्त ने जो जाल बिछाया है, वह सफल होगा। लोभी पुजारी मंत्री की हर बात पर सर हिलाने लगा, इस पर मंत्री को कोई बड़ा आश्चर्य नहीं हुआ। (और है)
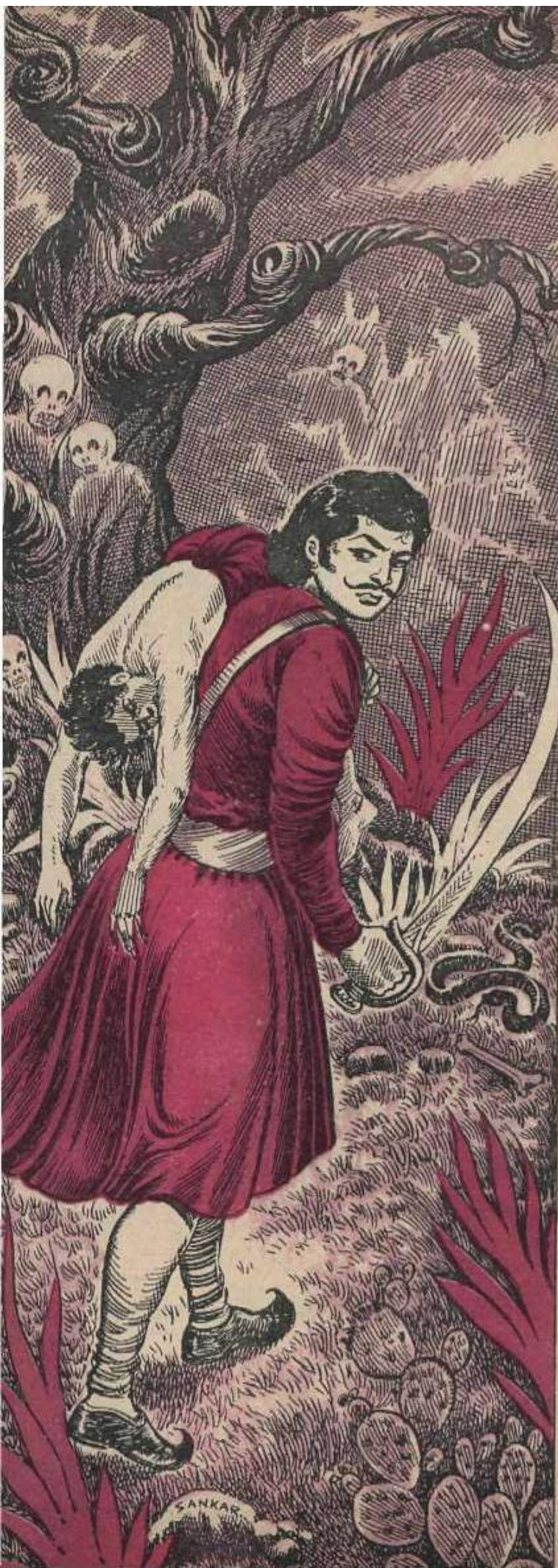
प्रेम का त्याग

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया, पेड़ से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा–"राजन, मानवों का परिस्थितियों का गुलाम होना सहज है, मगर कुछ लोग अकारण ही त्याग कर बैठते हैं। इसके प्रमाण स्वरूप मैं तुम्हें चन्द्रनगर की राजकुमारी चन्द्रकला के विवाह की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनो।"

बेताल यों कहने लगा: प्राचीनकाल में लक्ष्मीपुर नामक राज्य पर राजेन्द्रवर्मा शासन करता था। वह बहुत ही बड़ा योद्धा और पराक्रमी था। वह अपने मंत्री जयसिंह की मदद से बड़ी कुशलतापूर्वक राज्य करता था और जनता की सुख-शांति का सदा ख़्याल करता था।

वेताल कथाएँ

राजा के वीरवर्मा नामक एक पुत्र था और मंत्री के पुत्र का नाम तेजसिंह था। दोनों की आयु लगभग समान थी और दोनों सुंदर भी थे। दोनों ने एक ही गुरु के यहाँ विद्याभ्यास किया। वीरता में एक दूसरे से कम न थे।

एक दिन राजकुमार और मंत्री-पुत्र शिकार खेलने अपने राज्य की सीमा पर स्थित एक जंगल में चले गये। दुपहर तक शिकार खेलकर थक गये और एक विशाल बरगद की छाया में विश्राम किया। राजकुमार सो रहा था और मंत्री-पुत्र हाथ में तलवार लिये राजकुमार की रक्षा करने के लिए पहरा दे रहा था।
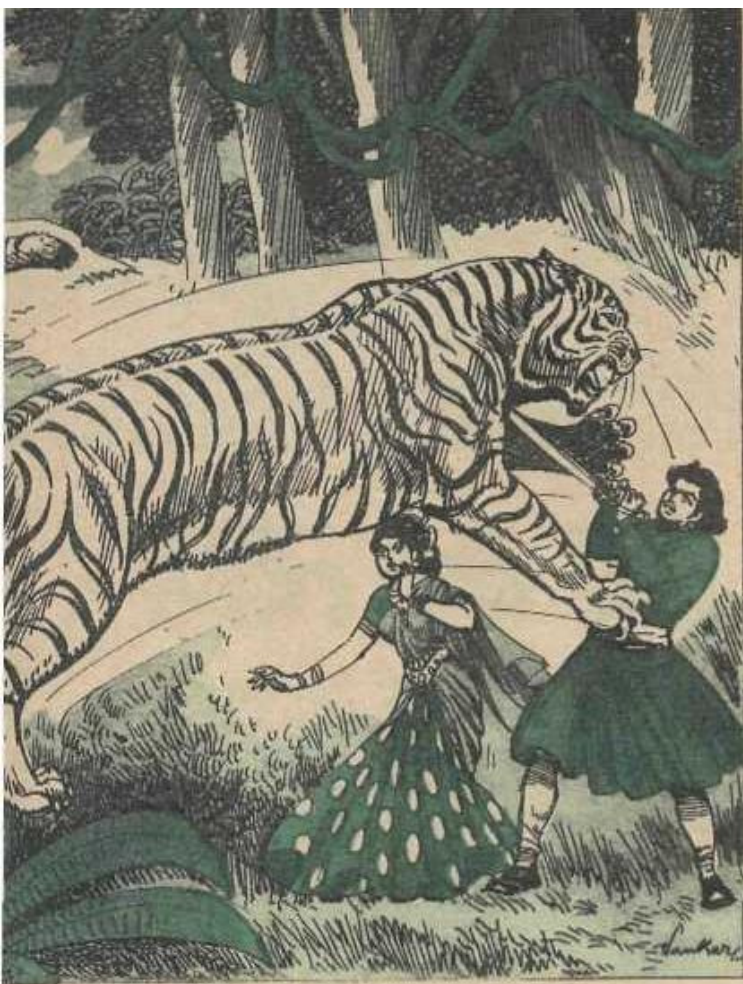
इतने में एक शेर के दहाड़ने और एक नारी के चिल्लाने की आवाज़ सुनायी दी। तेजसिंह उस आवाज़ की दिशा में दौड़ पड़ा। एक अप्सरा जैसी युवती पर शेर झपटने को था। मंत्री का पुत्र पीछे से जाकर शेर पर टूट पड़ा और उसके कलेजे में तलवार भोंक दी। भयंकर गरजन करते शेर ने जान दे दी।

इस घटना पर आश्चर्य चकित हो उस युवती ने मंत्री के पुत्र की ओर कृतज्ञतापूर्ण दृष्टि से देखा। मंत्री का पुत्र भी उसके सौंदर्य पर चकित हो उसकी ओर देखता रह गया।

वे दोनों बात कर ही रहे थे कि राजकुमार भी नींद से जाग पड़ा। तलवार खींचे उस प्रदेश में दौड़ते हुए आ पहुँचा। राजकुमार ने मंत्री-पुत्र से कहा—"नींद से जागकर मैंने देखा, तो तुम दिखाई न दिये। इतने में शेर का गर्जन सुनाई पड़ा। मैं यह सोचकर डर गया कि तुम कहीं शेर के मुँह में न चले गये हो!" इसके बाद उस युवती की ओर देखकर राजकुमार ने मंत्री-पुत्र से पूछा—"यह युवती कौन है?"

"मैं नहीं जानता! मैंने अभी अभी इसे शेर के हमले से बचाया।" मंत्री-पुत्र ने उत्तर दिया।

"मेरा नाम चन्द्रकला है। मैं चन्द्रनगर की राजकुमारी हूँ।" युवती ने कहा।

"ऐसे भयंकर जंगल में तुम जैसी कोमल नारी का संचार किया जा सकता है?" राजकुमार वीरवर्मा ने पूछा।

"दिन भर अंतःपुर में बैठे रहने से ऊब जाती हूँ। इसलिए घोड़े पर वन-विहार करने चल पड़ी। जंगल में मैं दूर तक भी नहीं पहुँची। इतने में शेर का गर्जन सुनाई दिया। घोड़ा भड़क उठा। वह रोकने पर भी रुके बिना दौड़ता गया और आखिर शेर के सामने आ गया। घोड़ा मुझे गिराकर कहीं भाग गया है। इनकी मेहर्बानी से मेरी जान बच गयी।" चन्द्रकला ने जवाब दिया।

"मैं लक्ष्मीपुर का युवराज हूँ। मेरा नाम वीरवर्मा है। यह हमारे मंत्री का पुत्र तेजसिंह है। हम दोनों सुबह से शिकार खेलकर थक गये और विश्राम कर रहे थे। इस प्रकार हमारा परिचय हुआ।" राजकुमार ने कहा।

"मैं आप लोगों का उपकार भूल नहीं सकती। मेरा निवेदन है कि मुझे अपने घर पहुँचाकर हमारा आतिथ्य स्वीकार करें।" चन्द्रकला ने कहा।

राजकुमार ने प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार कर लिया। चन्द्रकला पर उसका मन रम गया था। चन्द्रकला के पिता नरेन्द्रवर्मा ने वीरवर्मा तथा तेजसिंह का अभिनंदन किया। अपनी पुत्री की रक्षा करने के

उपलक्ष्य में उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए कहा–"यों तो हम पड़ोसी हैं, फिर भी इस रूप में ही सही तुम दोनों हमारे अतिथि बने। हमारे बीच स्नेह के बढ़ने के लिए यह एक अच्छा मौक़ा है।" इसके बाद राजा ने उनका राजोचित सत्कार किया और अपने दल के साथ उन्हें लक्ष्मीपुर भेज दिया।

अपने नगर में पहुँचते ही वीरवर्मा ने अपने पिता से कहा–"पिताजी, हमारे पड़ोसी राजा नरेन्द्रवर्मा की पुत्री चन्द्रकला के साथ मैं विवाह करना चाहता हूँ। आप इसके लिए आवश्यक सारे प्रबंध करवा दीजिये।"

राजेन्द्रवर्मा ने प्रसन्न होकर मंत्री को बुला भेजा और सारा समाचार सुनाकर विवाह का निश्चय करने के लिए नरेन्द्रवर्मा के पास एक दूत को भेजने का आदेश दिया। मंत्री ने एक राज कर्मचारी के द्वारा नरेन्द्रवर्मा के पास संदेश भेजा।

चन्द्रनगर के राजा नरेन्द्रवर्मा को यह प्रसन्नता का ही विषय था कि पड़ोसी राज्य के युवराज को अपना जामाता बनावे। उसने स्वयं वीरवर्मा को देखा भी था। मगर यह समाचार सुनकर चन्द्रकला प्रसन्न नहीं हुई क्योंकि उसने मंत्री-पुत्र के साथ प्रेम किया था। राजकुमार के लिए उसके दिल में कोई स्थान न था।

नरेन्द्रवर्मा ने लक्ष्मीपुर के दूत से कहा–"मेरी पुत्री इस विवाह के लिए स्वीकृति नहीं दे रही है। यह समाचार तुम अपने मंत्री से कह दो।" दूत लक्ष्मीपुर को लौट आया।

जब राजेन्द्रवर्मा को यह समाचार मिला कि उसके पुत्र ने चन्द्रनगर की राजकुमारी को मोह लिया, पर वह राजी नहीं हुई, तो उसे बड़ा क्रोध आया। उसने मंत्री से कहा–"यह कैसा अहंकार है? मेरे पुत्र के सौंदर्य और पराक्रम की बराबरी कर सकनेवाले कौन हैं? उसमें कौन-सी ऐसी

तृटि है जिसके कारण उस कन्या ने तिरस्कार किया है? यह हमारे लिए असहनीय अपमान की बात है। तुरंत चन्द्रनगर पर आक्रमण कीजिये। उस नरेन्द्रवर्मा को युद्ध में हराकर मैं उस कन्या को अपनी बहू बना लूँगा।"

"महाराज, आप शांत हो जाइये। इस बार एक समर्थ दूत को भेजकर कार्य को अनुकूल बनाने का यत्न करूँगा।" मंत्री ने सुझाया।

मंत्री ने घर लौटकर अपने पुत्र तेजसिंह से कहा-"बेटा, हमारे युवराज के साथ चन्द्रनगर की राजकुमारी ने विवाह करने से इनकार किया है। तुम जाकर उसे विवाह के लिए मनवा दो। वरना दोनों देशों के साथ हमारे लिए भी खतरा उत्पन्न होगा।"

तेजसिंह चन्द्रनगर के लिए चल पड़ा। राजा नरेन्द्रवर्मा के दर्शन कर राजकुमारी से मिलने की अनुमति माँगी। नरेन्द्रवर्मा ने सम्मति दी।

चन्द्रकला तेजसिंह को देख बहुत प्रसन्न हुई। तेज ने राजकुमारी से कहा- "राजकुमारी, मैं अपने युवराज की ओर से विवाह का संदेश लेकर आया हूँ। मैंने सुना है कि तुमने उनसे विवाह करने से अस्वीकार किया है। मेरी दृष्टि में इनकार करने का कोई कारण दिखाई नहीं देता। हमारे युवराज सौंदर्य और पराक्रम में अपनी समता नहीं रखते। तुमको हृदय से प्यार करते हैं। वे मेरे मालिक ही नहीं बल्कि प्राण के समान मित्र भी हैं। उनके प्रेम का भंग होने से मुझे अत्यंत दुख होगा। इसलिए मैं हृदयपूर्वक चाहता हूँ कि तुम हमारे युवराज के साथ विवाह करने के लिए मान जाये।"
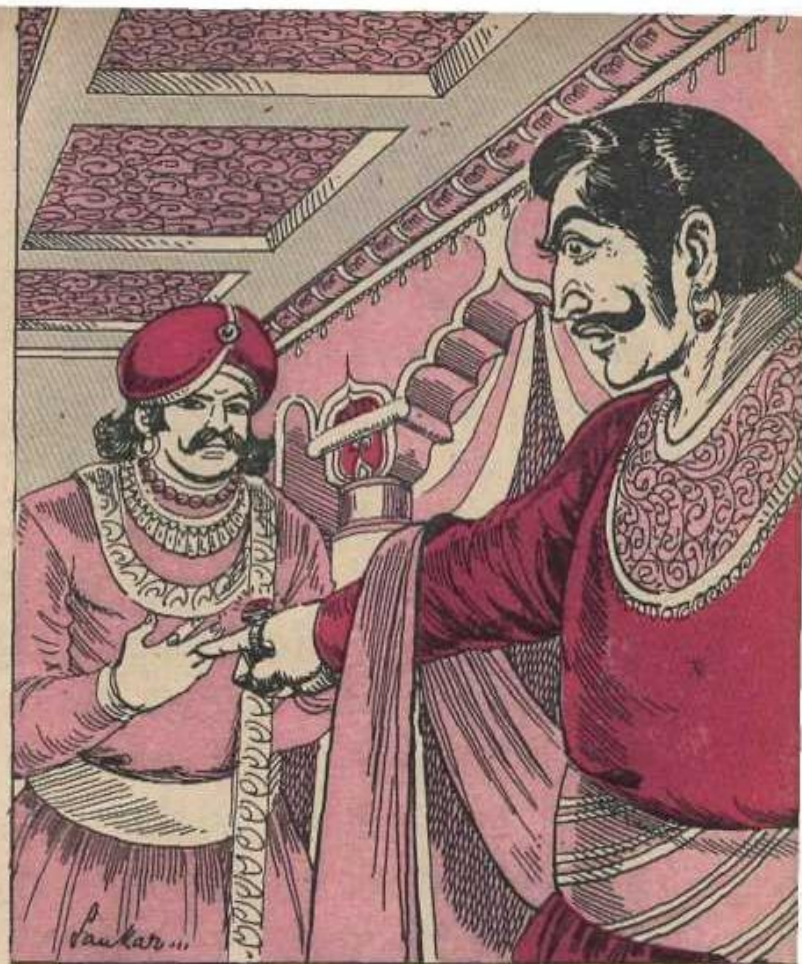
चन्द्रकला बड़ी देर तक सर झुकाये सोचती रही, आखिर सर उठाकर बोली- "मैं तुम्हारे मालिक के साथ विवाह करने के लिए स्वीकृति देती हूँ। यह समाचार अपने युवराज से कह दीजिये।"

तेजसिंह का दूत-कार्य सफल हुआ। इसलिए लक्ष्मीपुर के सभी निवासी प्रसन्न हुए। जल्द ही चन्द्रकला और वीरवर्मा का विवाह वैभव के साथ संपन्न हुआ।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा– "राजन, मेरे अनेक संदेह हैं। मंत्री ने यह क्यों सोचा कि अपने पुत्र को दूत बनाकर भेजने से कार्य सफल होगा? मंत्री-पुत्र से प्यार करनेवाली चन्द्रकला ने युवराज के साथ विवाह करने की स्वीकृति क्यों दी? क्या उसका प्रेम सच्चा नहीं है? या उसने अपने प्रेम का त्याग किया है? इन प्रश्नों का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सर टुकड़े-टुकड़े हो जायगा।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा–"मंत्री ने सोचा कि चन्द्रकला ने उसके पुत्र के साथ प्यार किया है, इसलिए राजकुमार के साथ विवाह करने से इनकार किया है। इसीलिए उसने अपने पुत्र को राजकुमार के विवाह का निश्चय करने दूत बनाकर भेजा। मंत्री का सोचना सही निकला। चन्द्रकला को अपने प्रेम का त्याग करने का मौक़ा ही नहीं आया। उसने जिसके साथ प्रेम किया था, वह व्यक्ति दूसरे की ओर से विवाह का दूत-कार्य करने आया। राजकुमारी के लिए इस बात का कोई प्रमाण ही नहीं है कि मंत्री-पुत्र उसके साथ प्रेम करता है। अलावा इसके राजकुमारी के सामने यह भी स्पष्ट हो गया कि मंत्री-पुत्र किसी भी हालत में उसके साथ विवाह न कर सकेगा। यही कारण है कि उसने राजकुमार के साथ विवाह करने की स्वीकृति दी। प्रेम का त्याग राजकुमारी ने नहीं किया, बल्कि तेजसिंह ने किया है। उसका प्रत्यर्थी उसका मित्र ही नहीं, अपितु ऊँचे ओहदे पर है, इसलिए उसे त्याग करना पड़ा।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

करनी का फल

एक गाँव में एक ओझा दंपति था। उनके एक बहुत बड़ा घर और पंद्रह-बीस बीघे जमीन भी थी। उनके तीन पुत्र थे। वे तीनों पास के शहर में नौकरी करते थे। सुबह घर पर खाना खाकर शहर जाते और संध्या तक लौट आते।

उस गाँव के मंदिर में प्रति दिन पुराण-पाठ होता था। ओझा और उसकी पत्नी शाम के वक़्त पुराण सुनने जाते और संध्या के समय शहर से लौटनेवाले अपने पुत्रों के साथ घर आ जाते थे।

ओझा के तीनों पुत्रों की शादियाँ शहर में ही हो गयी थीं। उनकी पत्नियाँ शहर में पैदा हुई और पली थीं। उनके पति तो शहर में ही नौकरी करते थे, पर उन्हें देहात में अपनी ज़िंदगी काटनी पड़ती थी। यह बात उन्हें कदापि पसंद न थी। वे मन ही मन बहुत दुखी थीं।

शाम के समय उनके सास-ससुर पुराण सुनने जाकर संध्या के समय अपने पुत्रों के साथ लौटते। इस बीच उन्हें काफ़ी समय मिलता था। तब तीनों बहुएँ एक साथ बैठकर अपने सुख-दुख की बातें किया करती थीं–"इस निरे देहात में मेरा मन बिलकुल नहीं लगता।" बड़ी बहू ने कहा। "हाँ, हाँ जीजी! इन बूढों की वज़ह से ही हमारे पति इस गाँव को छोड़ नहीं पा रहे हैं।" मंझली बहू ने कहा।

"मेरे माता-पिता ने यह सोच कर मेरा ब्याह किया कि मेरा पति शहर में ही नौकरी करता है। यदि उन्हें मालूम होता कि मैं एक गँवार की तरह ज़िंदगी बिताऊँगी तो मेरे माता-पिता इस गाँव में मेरा ब्याह ही नहीं करते।" तीसरी बहू ने कहा।

उन बहुओं को अपने पतियों के साथ झगड़ा करके शहर में रहने का प्रबंध कराना

नारायण प्रसाद

संभव न था। क्योंकि इसके लिए उनके सास-ससुर बिलकुल तैयार न थे और उनके पति तो अपने माँ-बाप की आज्ञा का उल्लंघन करनेवाले न थे।

"हम भी तो बूढ़ों की आज्ञा का उल्लंघन नहीं करतीं।" एक ने कहा।

"इसीलिए हमारी कोई परवाह ही नहीं होती।" दूसरी बहू ने कहा।

"अगर हम उनके बताये काम न करें, तो क्या होगा?" तीसरी बहू ने सुझाया। "हमारे माँ-बापों को मालूम हो जाय कि हम अपने सास-ससुर की बात नहीं मानतीं, तो वे हमें ही दोष देंगे।" एक ने कहा।

"हमें सास-ससुर का बताया काम करना चाहिये पर जो काम कहे, वही करना है, उसे भी पूरा नहीं करना है। यह तो एक तरह का विद्रोह है। ऐसा करें तो ये बूढ़े हमसे ऊब उठेंगे और अलग जाने का मौक़ा मिलेगा।" इन शब्दों के साथ बड़ी बहू ने अपनी योजना छोटी बहुओं के सामने रखी। उस योजना को ठीक से अमल करने का दोनों बहुओं ने आश्वासन दिया।

तीनों बहुओं ने इस तरह विद्रोह शुरू किया। सास यदि किसी बहू को झाड़ू देने का आदेश देती तो वह इस कमरे की धूल को दूसरे कमरे में फेंक कर कह देती— "सासजी, मैंने झाड़ू दे दिया।"

ससुर अगर कपड़े सुखाने को कहते तो दूसरी बहू वैसे ही सुखा देती। पूछने पर
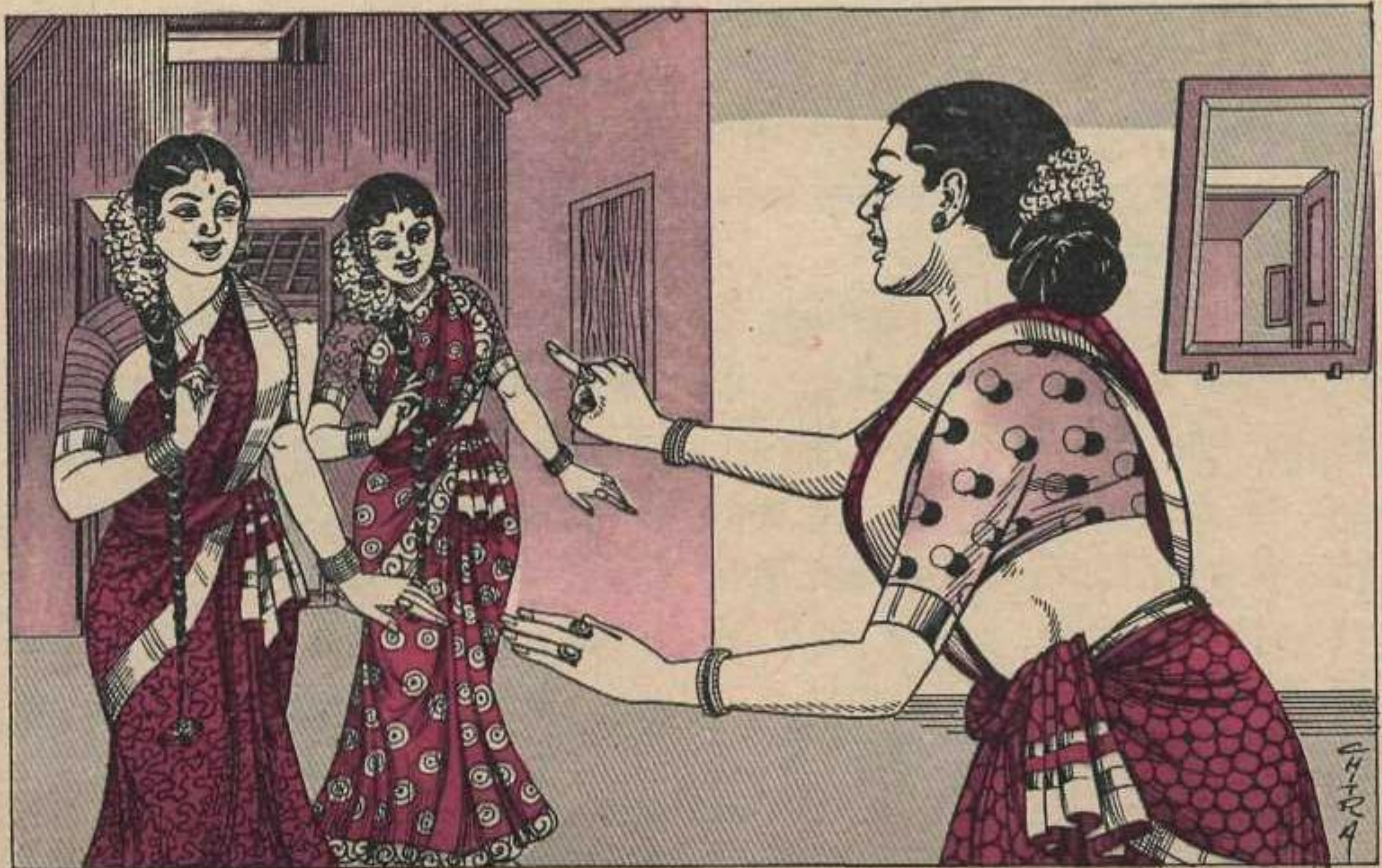
जवाब देती–"ससुरजी ने मुझ से कपड़े धो कर सुखाने को थोड़े ही बताया?"

सास अगर किसी बहू से बर्तन मांझने को कहती तो वह बर्तन मांझ कर धोये बिना वैसे ही छोड़ देती।

सास यदि किसी बहू को ससुर को खाना परोसने का आदेश देती, तो वह सिर्फ़ चावल परोस देती, तरकारी, चटनी, दाल नहीं परोसती। चूल्हे पर से बर्तन उतारने को कहती तो बर्तन उतार कर आग बुझना छोड़ देती। इसी तरह हर काम आधा करके छोड़ देतीं।

बहुओं का यह बर्ताव सास-ससुर के लिए सर दर्द ही बन गया। वे अपनी बहुओं से कुछ कह न पाये, पर अपने पुत्रों को सारी बातें का परिचय करा सके। पुत्रों ने सारी बातें सुनकर यही कहा–"आप चिंता न कीजिये, हम उन्हें रास्ते पर लायेंगे।"

तीनों पुत्रों ने आपस में चर्चा की। उन लोगों ने अपनी अपनी पत्नी से पूछा–"संक्रांति का पर्व आनेवाला है। तुम क्या चाहती हो?"

"मुझे तो बनारसी रेशमी साड़ी पसंद है।" बड़ी बहू ने कहा।

"मुझे तो सोने की चूड़ियाँ पसंद हैं।" दूसरी बहू ने कहा।

"मैं बचपन से चन्द्रहार पहनना चाहती थी। वही अच्छा है।" तीसरी बहू ने कहा। उस दिन से तीनों बहुएँ संक्रांति
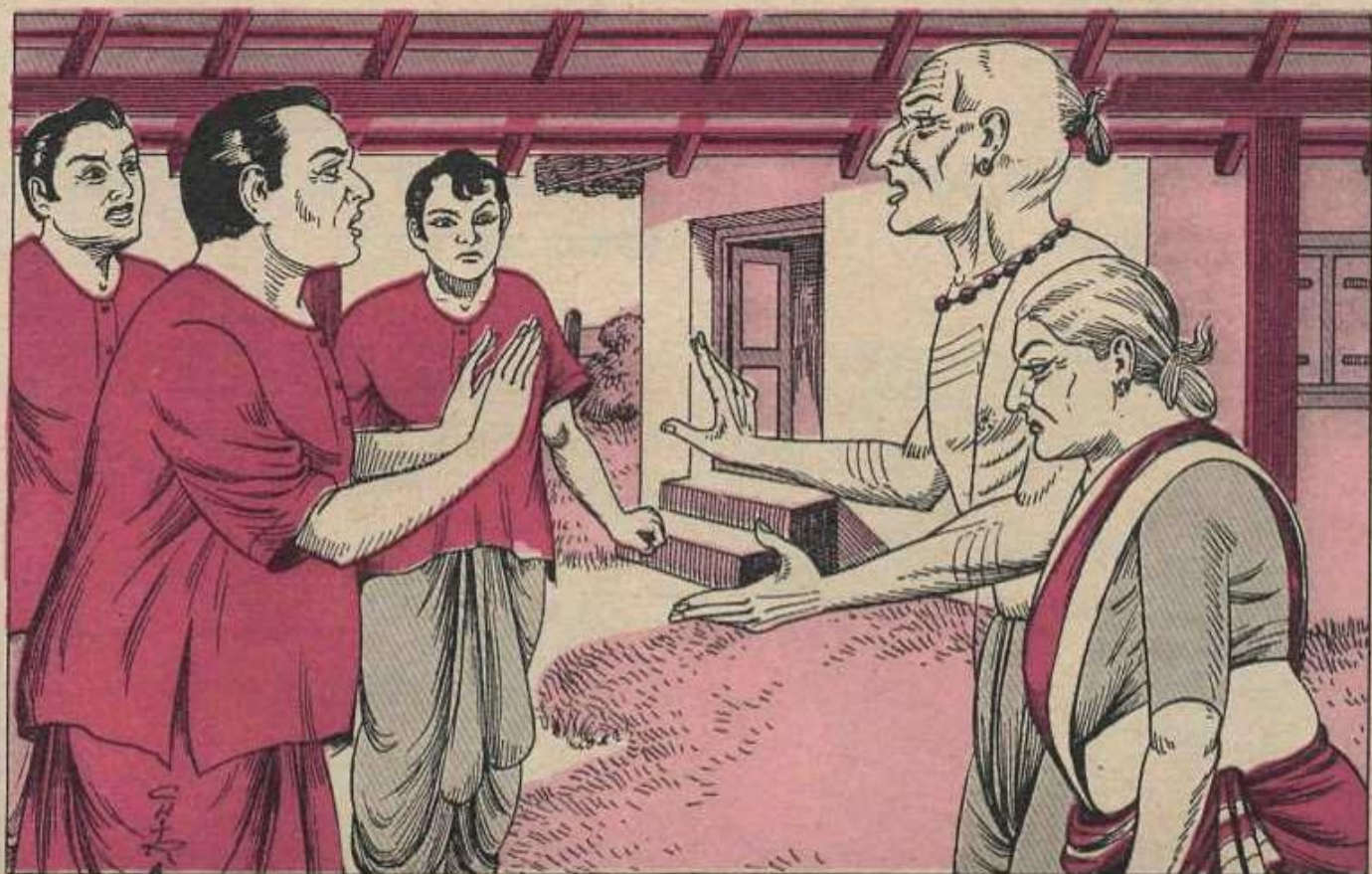
पर्व के दिन की बड़ी उत्सुकता के साथ प्रतीक्षा करने लगीं। जब-तब उन्हें संदेह भी पैदा होता था। बड़ी बहू ने अपने पति से यह नहीं बताया था कि बनारसी साड़ी किस रंग की चाहिये। दूसरी ने यह नहीं बताया कि किस क़िस्म की सोने की चूड़ियाँ चाहिये। तीसरी ने चन्द्रहार का ब्यौरा नहीं दिया था। उनके पतियों ने भी फिर इस संबंध में कुछ पूछा न था।

संक्रांति पर्व आया। उसके पहले दिन तीनों पुत्र कोई चीजें खरीद लाये। पर्व के दिन बहुओं की प्रसन्नता की सीमा न रही।

जब घर के सब लोग दालान में बैठे हुए थे, तब बड़े पुत्र ने बनारसी साड़ी लाकर अपनी माँ के हाथ में देते हुए कहा–"माँ, तुम यह रेशमी साड़ी पहनो। मेरी पत्नी बहुत ख़ुश हो जायगी। उसे बनारसी साड़ी बहुत पसंद है।"

"उसे पसंद है तो उसी को क्यों नहीं दिया?" माँ ने पूछा।

"मैं ने उस से पूछा कि तुम्हें क्या चाहिये? उसने यही कहा कि उसे बनारसी साड़ी पसंद है, मगर यह नहीं कहा कि उसे यह साड़ी चाहिये।" बड़े पुत्र ने जवाब दिया।

दूसरे पुत्र ने माँ के हाथ में सोने की चूड़ियाँ देकर कहा–"तुम ये चूड़ियाँ पहन लो, तुम्हारी बहू को ये बहुत पसंद हैं।"

तीसरे पुत्र ने माँ के हाथ में चन्द्रहार देकर ये ही बातें कहीं।

तीनों बहुओं के चेहरे अपमान से मुरझा गये। वे अपने दुख को रोक न पायीं। सास-ससुर के पैरों पर गिर कर क्षमा माँगी।

सास ने अपनी बहुओं को सांत्वना देते हुए कहा–"तुम अपनी अपनी चीज़ें ले लो। इस उम्र में मुझे ये सारी चीज़ें थोड़े ही चाहिये?"

इसके बाद वे बहुएँ अपने सास-ससुर को अपने मां-बाप से ज़्यादा मानने लगीं। फिर उन लोगों ने कभी उन के आदेश का उल्लंघन नहीं किया।
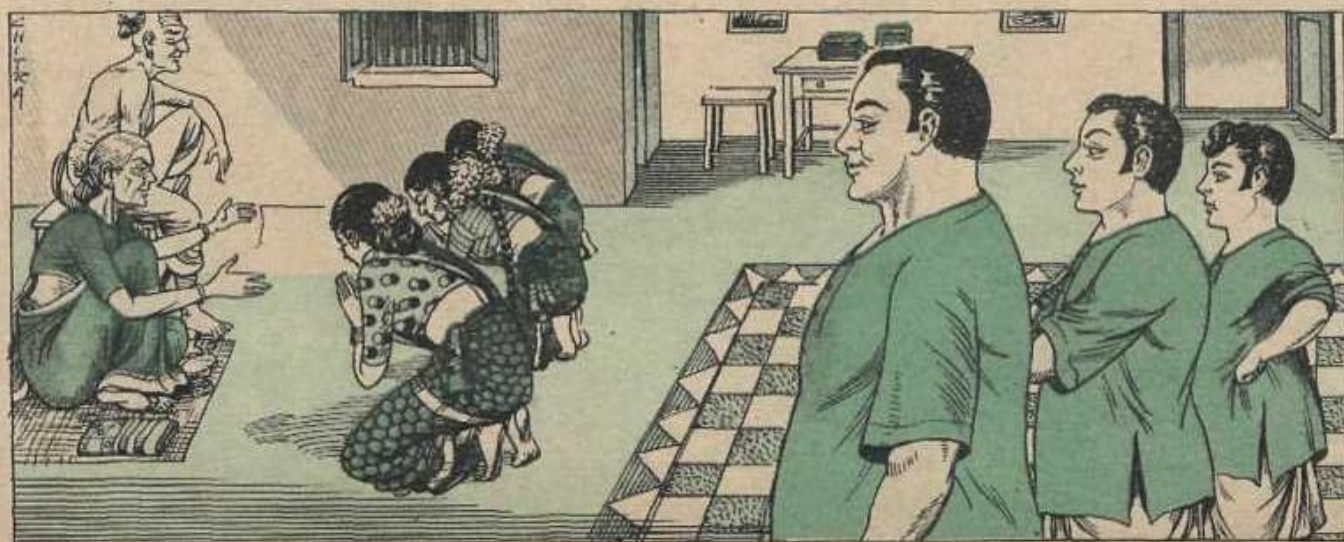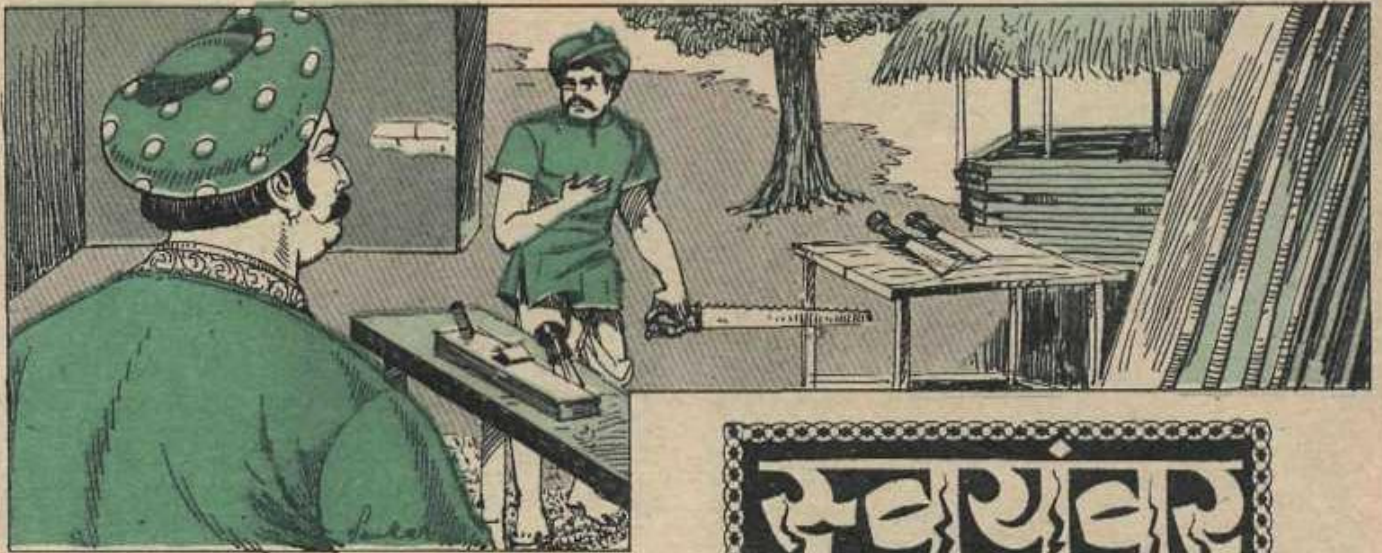
स्वयंवर

बात बहुत पुरानी है, देवगिरि नगर पर राजा सुदर्शन सेन शासन करता था। उसकी इकलौती बेटी का नाम चन्द्रसेना था। ज्यों ज्यों वह बढ़ती गयी, त्यों त्यों उसका सौंदर्य निखरता गया। देश-देश के राजकुमार इस ख्याल से चन्द्रसेना के साथ विवाह करना चाहते थे–एक तो वह अनुपम सौंदर्यवती है और दूसरे उसके साथ विवाह करने पर देवगिरि राज्य भी हाथ लगेगा।

राजा सुदर्शन के लिए चन्द्रसेना का विवाह एक जटिल समस्या बन गया। उसका विवाह किसी एक राजकुमार के साथ किया जाय तो दूसरे राजकुमार क्रुद्ध हो जायेंगे; इस तरह राजाओं के बीच कलह बढ़ेगा और देवगिरि के लिए भी खतरा पैदा हो सकता है। इस खतरे से बचने के लिए राजा सुदर्शन के सामने राजकुमारी के स्वयंवर करने के सिवा दूसरा कोई उपाय न था। मगर राजा यह निर्णय नहीं कर पाया कि स्वयंवर का प्रबंध किस प्रकार करे। यदि चन्द्रसेना अपनी पसंद के वर को चुन ले तो बाक़ी राजकुमार असंतुष्ट हो जायेंगे।

राजा इस प्रकार स्वयंवर को लेकर परेशान था, तभी एक जौहरी ने उसके सामने दूसरी समस्या उपस्थित कर दी।

वह समस्या यों है:–जौहरी व्यापार करने के लिए दूर देशों में जाना चाहता था। रास्ते में चोरों का डर था। इसलिए उसने अपने साथ ले जानेवाले हीरों को एक हाथ भर लंबी लाठी के भीतर छिपाकर इस तरह लाठी तैयार करने को एक कुशल बढ़ई से अनुरोध किया कि लोगों को यह पता न चले कि लाठी के भीतर हीरे रखे गये हैं। बढ़ई ने यह काम करने को मान लिया,

जानकी राय

मगर उसने दो शर्तें रखीं। एक यह कि हीरों को लाठी के भीतर जमाते वक़्त व्यापारी न देखे। दूसरी यह कि लाठी को व्यापारी के हाथ में सौंपने के बाद एक महीने तक उन हीरों की जिम्मेदारी बढ़ई की होगी। इस एक महीने के अन्दर व्यापारी अगर लाठी को तोड़ कर देखें और उसमें हीरे न हों तो उनका मूल्य बढ़ई व्यापारी को देगा। यदि लाठी के अन्दर हीरे हों तो उन्हें बढ़ई को देना होगा। एक महीने की अवधि पूरा होने पर व्यापारी लाठी तोड़ कर देखें और उसमें हीरे न हों तो उसकी जिम्मेदारी बढ़ई पर न होगी।

इन शर्तों में जो दिक्कातें थीं, उन पर विचार किये बिना ही व्यापारी ने उन शर्तों को मान लिया। बढ़ई ने व्यापारी से हीरे लेकर लाठी तैयार करके उसे सौंप दी। व्यापारी ने बड़ी सावधानी से लाठी की जाँच की। पर उसे ज़रा भी इस बात का संदेह न हुआ कि लाठी के अन्दर पोल हो या ऊपर जोड़ हो। व्यापारी ने सोचा कि बढ़ई ने हीरे हड़प कर मामूली लाठी तैयार करके दी हो, यदि लाठी तोड़ कर देखना चाहे तो अगर उसमें हीरे दिखाई दे तो उन्हें बढ़ई को देना पड़ेगा। उसमें हीरे न हों ती बढ़ई से या तो हीरे वसूल किया जा सकता है या उस का मूल्य। मगर व्यापारी की समस्या हल न होगी। यदि एक महीने की अवधि पूरी हो जाने के बाद लाठी तोड़कर देखे और उसमें हीरे न हो, तो क्या किया जाय? अवधि पूरी होने पर लाठी के भीतर के हीरों की जिम्मेदारी बढ़ई की न होगी।

हीरों के व्यापारी ने यह समस्या राजा के सामने रखकर कहा–"महाराज, इस लाठी को तोड़े बिना मुझे यह बताना है कि इसमें हीरे हैं कि नहीं।"

राजा के लिए राजकुमारी के स्वयंवर का प्रबंध करने के लिए व्यापारी की समस्या अच्छी तरह काम दे पायी। राजा

ने यह ढिंढोरा पिटवाया कि उसकी पुत्री का स्वयंवर होनेवाला है। राजकुमारी के साथ राज्य को भी प्राप्त करने के लोभ में पड़कर दूर-दूर देशों के राजकुमार स्वयंवर में आये।

राजा ने सभी राजकुमारों को लाठी दिखाकर कहा-"यह लाठी केवल साधारण लाठी है या इसमें कोई अन्य वस्तु छिपायी गयी है। इस बात को जो सप्रमाण साबित कर दिखायेगा, उसके साथ मैं अपनी कन्या का विवाह करूँगा।"

लाठी को एक मेज़ पर रखा गया। एक एक राजकुमार ने आकर लाठी की जाँच की। वह चिकनी थी, पर उसमें कहीं जोड़ दिखाई न देती थी।

"इसमें कुछ नहीं है, यह मामूली लाठी है।" यह बात कहकर अनेक राजकुमार अपने अपने आसनों पर जा बैठे। इस दृश्य को देख व्यापारी का कलेजा धड़कने लगा।

इतने में सुवर्चल नगर का युवराज अपने आसन से उठ कर आया। उसने लाठी के मध्य भाग को दो उंगलियों से पकड़ कर देखा और कहा-"इसमें कोई वस्तु ज़रूर है। पर जल से भरी नांद मंगवा दे तो मैं यह बात साबित कर सकता हूँ।"

राजा के सेवकों ने पानी से भरी नांद लाकर रख दी। राजकुमार ने लाठी को नांद में डाल दिया। वह पानी के सीध में खड़ी रह गयी। लाठी का आधा भाग जल में डूबा हुआ था और शेष भाग पानी पर तैरते सबको दिखाई दे रहा था।

"यदि यह मामूली लाठी होती तो पानी पर आड़े में तैरती। इसके निचले भाग में बोझ है, इस वजह से वह हिस्सा पानी में डूब गया है। लाठी के निचले भाग में कोई बोझीला पदार्थ है, यह मानने के लिए यही साबित करता है।" सुवर्चल के युवराज ने समझाया।

इसके बाद सुवर्चल देश के युवराज के साथ चन्द्रसेना का विवाह वैभव के साथ संपन्न हुआ। विवाह के समाप्त होते ही जौहरी व्यापार करने विदेशों में चला गया।
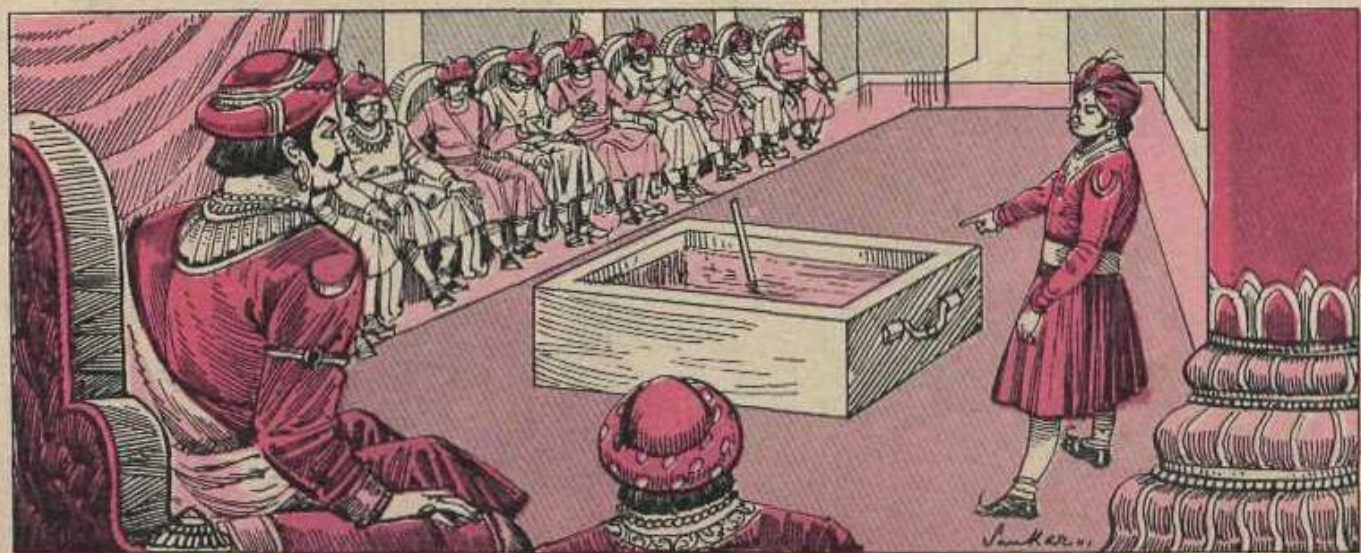
दो कंजूस

एक गाँव में दो भाई थे। वे एक से बढ़कर एक कंजूस थे। एक दिन छोटे भाई को किसी गाँव में जाना पड़ा। इसलिए वह मुँह अंधेरे उठा, जूते पहनकर चल पड़ा।

थोड़ी दूर चलने पर उसने मन में सोचा–

"घर में दिया बुझाये बिना चला आया। बड़े भाई घोड़े बेचकर सोते हैं। दिया सवेरे तक जलता रहा तो न मालूम कितना तेल ख़र्च होगा!" यह सोचकर छोटा भाई वापस लौट आया।

तब तक बड़ा भाई जाग रहा था। उसने अपने छोटे भाई को लौटे देख पूछा–"क्यों तुम लौट आये?"

"*दिया बुझाना भूल गया था। यह बात याद आयी। नाहक़ तेल ख़र्च होगा। यह* सोचकर उसे बुझाने के लिए लौट आया।" छोटे ने जवाब दिया।

"पगले, तुमने थोड़े से तेल के ख़र्च हो जाने की चिंता की, मगर तुमने क्या अपने जूतों के घिस जाने की बात भी सोची?" बड़े भाई ने पूछा।

सैकड़ों साल पहले अलेग्जांड्रिया नगर में अबू कीर नामक एक रंगरेज़ और अबू सीर नामक एक नाई रहा करते थे। उनकी दूकानें आजू-बाजू में थीं।

अबू कीर अव्वल दर्जे का झूठाखोर, दगाबाज और पापी था। वह बुरे से बुरा काम करने में भी झिझकता न था। कोई उसके पास कपड़े रंगाने के लिए आते तो उनसे रंग ख़रीदने का बहाना करके पहले ही रुपये ले लेता था। ग्राहक जो पैसे देते, वह ख़र्च कर बैठता और साथ ही उनके कपड़े बेचकर खाने-पीने और मनोरंजन में उड़ा देता। कभी ग्राहक पहुँचकर पूछते–"क्या कपड़ों का रंगना पूरा हो गया?" तो वह आज और कल पर टाल देता। कभी कहता–"अल्लाह की क़सम मेरी औरत का प्रसव हो गया है। मुझे दम लेने की फ़ुरसत नहीं है।" "घर भर में रिश्तेदार हैं, दो-चार दिन ठहर जाय तो आप लोगों का काम पूरा किये देता हूँ।" या और कोई बहाना बना देता।

यदि ग्राहक ऊबकर यह पूछ बैठते–"सच बता दो। हमारे कपड़े तुमने क्या किये? तुम्हारे रंगने से दूर रहा, बस, हमारे कपड़े वापस कर दो।" तो अबू कीर सर पीटते हुए, रोते-धोते यही जवाब देता–"साहब! मैं क्या करूँ? आपके कपड़े रंगकर बाहर सुखाया, अन्दर जाकर लौटकर देखता हूँ तो गायब हो गये हैं! मुझे शक होता है कि मेरे पड़ोसी नाई ने ही यह काम किया है।"

ग्राहक यदि भलमानुस होता तो यह कहकर चला जाता–"सब अल्लाह की मर्जी!" यदि गुस्सैल होता तो सड़क पर लड़ाई-झगड़े के लिए तैयार हो जाता।

अबू कीर के कई ग्राहकों ने काजी के पास जाकर शिकायत की, मगर कोई भी अबू कीर से अपना मूल्य वसूल नहीं कर पाया। क्योंकि उसकी दूकान में ज़ब्त करने के लिए कोई चीज़ बची न थी।

थोड़े ही दिनों में अबू कीर की दगाबाजी का पता सबको लग गया। अब उसके पास कोई ग्राहक आता न था। इसलिए उसे अपना पेट भरना दूभर हो गया। एक दिन उसने अबू सीर के घर पहुंचकर अपना बुरा हाल सुनाया और रो पड़ा।

अबू सीर गरीब ज़रूर था, पर धर्मात्मा था। वह अबू कीर की हालत पर पसीज उठा। उसने समझाते हुए कहा—" भाई, पड़ोसी की मदद करना मेरा फ़र्ज है। तुम्हारी हालत के सुधरने तक तुम मेरे ही घर रहो, जो कुछ हम खाते हैं, उसी से तुम भी अपना पेट भर लो।"

अबू कीर नाई के घर आया और कुछ दिन तक अपनी ज़रूरतों को पूरा करता रहा। एक दिन अबू सीर ने अबू कीर से कहा—" भाई साहब! मैं हजामत करने में नाक़ाबिल नहीं हूँ। मगर मेरे गरीब होने की वजह से लोग ज़्यादा तादाद में मेरे पास नहीं आते हैं। मेरी कमाई तुम्हारे और मेरे परिवार के लिए पूरी नहीं पड़ रही है। न मालूम अल्लाह की मेहर्बानी कैसी है?"

इस पर अबू कीर ने सुझाया—" दोस्त, इस शहर में तुम्हारा पेशा ठीक से नहीं
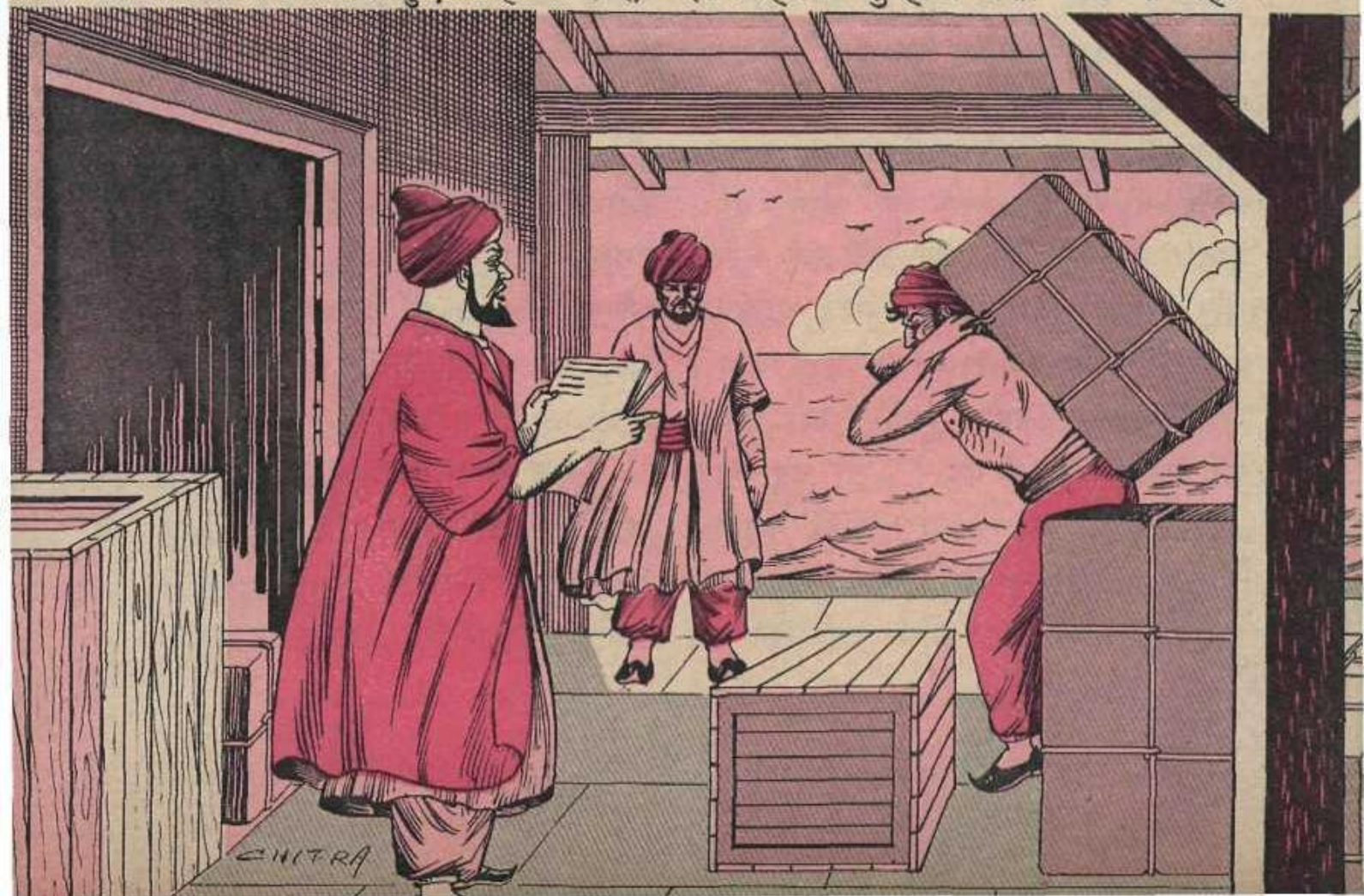
चलता है और मेरा व्यापार भी मंद पड़ गया है। इसकी वजह जानते हो? इस शहर के लोग निरे बेवकूफ़ हैं। तुम बहुत कुछ कमाते हो और फिर भी तक़लीफ़ें झेलते हो! यह मुझे अच्छा नहीं लगता। इस कमबख़्त देश को छोड़कर हम दूसरे देश में चले जायेंगे तो हम ख़ूब चमक सकते हैं। कई नये देशों को देखने में मजा आयेगा; दोनों हाथों से खूब कमा सकते हैं। चलो, दूकान बंद करके हम विदेशों के लिए रवाना हो जायेंगे।"

अबू कीर की बातें अबू सीर पर जादू का काम कर गयीं। वह भी अपने औज़ार लेकर यात्रा के लिए चल पड़ा। घर से निकलने के पहले अबू कीर ने कहा—"हम दोनों पहले यह क़सम खायेंगे कि आज से हम सगे भाइयों जैसा व्यवहार करेंगे। दोनों की कमाई का बराबर उपभोग करेंगे। हम में से किसी को भी पहले काम मिले, तो दूसरे का भार भी उठायेंगे।"

अबू सीर ने अबू कीर की बात मान ली। दोनों ने मिलकर कुरान का पाठ किया। तब दोनों समुद्र के किनारे चल पड़े। वहाँ पर एक नाव यात्रा के लिए तैयार खड़ी थी। दोनों उसमें जा पहुँचे।

यात्रा उन दोनों के अनुकूल रही। उस नाव में कुल मिलाकर एक सौ चालीस यात्री थे। उनमें नाई सिर्फ़ अबू सीर

एक ही था। उसने अपने दोस्त अबू कीर से कहा–"दोस्त! हमें तो खाना चाहिए। मैं कोशिश करके देखता हूँ कि ये यात्री मुझसे हजामत करवा ले! बदले में वे लोग हमें रोटी दे, पैसे दे, दोनों तरफ़ से हमारे लिए फ़ायदा ही फ़ायदा है।"

"अच्छी बात है! ज़रूर जाओ।" यह कहकर अबू कीर पैर पसारकर सो गया।
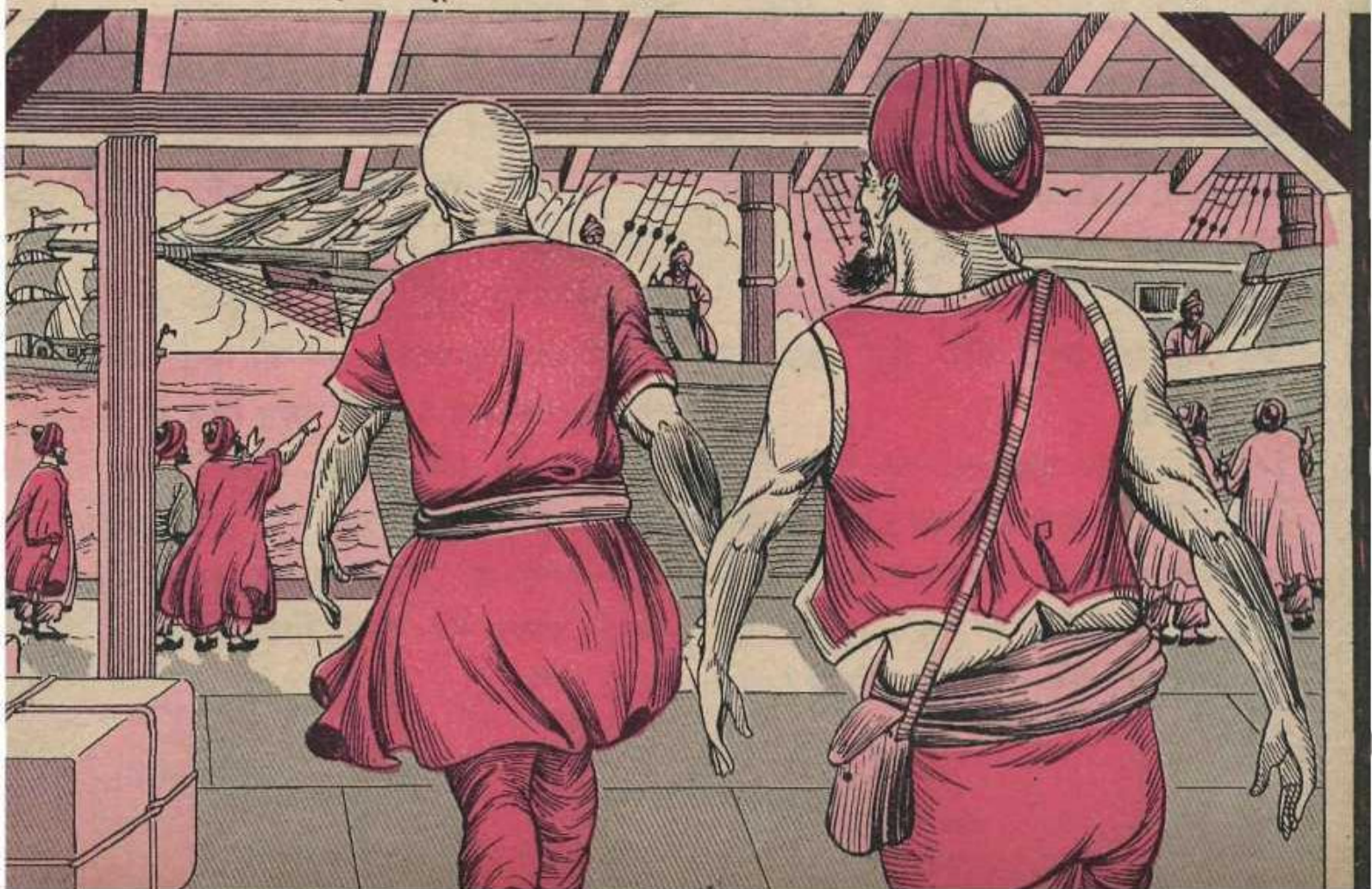
अबू सीर हजामत की पेटी लिए यात्रियों के बीच घूमने लगा। एक आदमी ने उससे हजामत करवाकर पैसे दिये। इस पर अबू सीर ने कहा–"साहब, इस यात्रा में पैसे किस काम में आते हैं? मुझे और मेरे दोस्त के लिए बिलकुल खाना नहीं है। रोटी दीजिये।"

यात्री ने नाई को रोटी, मक्खन और पानी भी दिये। अबू सीर उन्हें लेकर नाव के ऊपरी भाग पर पहुँचा। अबू कीर को जगाया। अबू कीर ने नींद से जागते ही सारी रोटी मक्खन के साथ खा डाली और पानी पिया। अबू सीर को उसने थोड़ा भी बचा नहीं रखा।

अबू कीर ने दिन भर यात्रियों को हजामत करके तीस रोटियाँ, बहुत-सा मक्खन. कीरे, खाने की और चीज़ों के साथ पंद्रह सिक्के दिराम नक़द भी कमाये। साथ ही सभी यात्री उसके काम पर बहुत खुश हुए।

बहुत जल्द ही अबू सीर का समाचार नाव के प्रधान नाविक को मालूम हो गया। उसने अबू सीर को बुलवा कर हजामत करवाई। अबू सीर ने नाविक की हजामत करते हुए अपनी दरिद्रता तथा रंगरेज की जिम्मेदारी का भी समाचार सुनाया। नाविक बड़ा ही रहम दिल था। अबू सीर के प्रति उसके दिल में दया उमड़ आयी। उसने अबू सीर से कहा–"इस यात्रा में रोज़ शाम को तुम और तुम्हारे दोस्त मेरे साथ मिलकर खाना खाया करो।"

अबू सीर ने लौटकर देखा कि अबू कीर सो रहा है। उसने नींद से जागने पर देखा उसके पास बहुत सारी रोटियाँ, मक्खन और खाने की और चीज़ें रखी हुई हैं। उसने अचरज में आकर पूछा—"ये सारी चीज़ें कैसे मिलीं?"

"अल्लाह की मेहर्बानी!" अबू सीर ने जवाब दिया।

अबू कीर ताबड़-तोड़ वे सारे पदार्थ खाने लगा।

"भाई! सारी चीजें अभी मत खाओ। कल के लिए भी थोड़ा बचा रखो। अलावा इसके नाविक ने हम दोनों को शाम को खाने पर बुलाया है।"

"मैं नहीं आ सकता। मुझे पित्त का विकार मालूम होता है। इन चीज़ों को मुझे खाने दो। तुम नाविक के साथ खाना खाओ।" ये शब्द कहते वह जल्दी जल्दी खाने लगा। उसके खाने का ढंग बड़ा भयंकर था। सभी पदार्थों को मुँह में घुसेड़-घुसेड़कर मुँह और नाक से बड़ी आवाज़ करते खा रहा था।

अबू कीर खाना खा ही रहा था, तभी नाविक के नौकर ने आकर उन दोनों को खाने के लिए बुलाया। अबू कीर ने असमर्थता प्रकट की, इस पर अबू सीर अकेला ही नाविक के साथ खाने के लिए चल पड़ा। अबू सीर को अकेले आये देख नाविक ने पूछा—"तुम्हारा दोस्त कहाँ?"

"समुद्र की यात्रा करने से उसे पित्त का विकार हो गया है।" अबू सीर ने उत्तर दिया।

"वह तो जल्दी अच्छा हो जायगा।" ये शब्द कहते अबू सीर को अपनी बगल में बैठाये खाना परोसवाया।

खाने के बाद जब अबू सीर लौटने लगा, तब नाविक ने एक बड़ी थाली में भोजन पदार्थ परोसवाकर उसके हाथ देते हुए कहा—"यह खाना तुम अपने दोस्त को दो।"

अबू सीर ने लौटकर अपने दोस्त से कहा–"मेरे मना करने पर भी तुमने वह मामूली खाना खाया। देखो तो सही, नाविक ने तुम्हारे लिए कैसा बढ़िया खाना भेजा है? तुमने कभी अपनी ज़िंदगी में ऐसी कबाबें खायी थी?"

"अच्छा! दे दो!" इन शब्दों के साथ अबू कीर ने थाली ले ली और भूखे भेड़िये की तरह दोनों हाथों से खाना उड़ाने लगा। चन्द ही मिनटों में उसने थाली खाली कर दी। इसके बाद दोनों सो गये।

बीस दिन तक यात्रा इसी प्रकार चली। अबू सीर रोज़ यात्रियों की हजामत करके खाने की चीज़ें ला देता। रात के वक़्त वह नाविक के साथ बैठकर दावत खाता। पर अबू कीर के खाने और सोने के सिवाय दूसरा कोई काम न था।

इक्कीसवें दिन सवेरे नाव किसी नये शहर के बंदरगाह में पहुँची। अबू कीर और अबू सीर ने शहर में जाकर एक सराय में छोटा-सा कमरा किराये पर लिया। अपने लिए आवश्यक चटाइयाँ वग़ैरह खरीद लीं। इन सब का मूल्य अबू सीर ने ही दिया। अबू कीर ने अभी तक अपने को पित्त के विकार का शिकार बताया। इसलिए उसे कमरे में छोड़ अबू सीर शहर में चल पड़ा। उसने किसी गली के नुक्कड़ पर एक जगह बना ली और अपना धंधा शुरू किया। पहले उसके पास मजदूर, गधे हाँकनेवाले, झाड़ू देने वाले जैसे लोग आया करते थे। लेकिन धीरे धीरे उसकी कला देख बड़े-बड़े सौदागर भी आने लगे।

अबू सीर शाम तक काम करता, खाने की चीज़ें लेकर कमरे में लौट आता। तब अबू कीर को जगाता। उसे जगाने के लिए विशेष कष्ट करना नहीं पड़ता था। बकरी का खूब पका माँस उसकी नाक से सुंघवा देता तो बस, वह उठ बैठता था। इसके बाद दोनों बैठकर भर पेट खाते थे।

(और है)

तारा के पिता एक छोटे जागीरदार थे। उनका घर बड़े जमींदार के महल के पास ही था। दोनों परिवारों में काफी मित्रता थी। एक दिन बड़े जमींदार के यहाँ दावत थी। जमींदार के लड़के की शादी होनेवाली थी। तारा भी अपने माता-पिता के साथ इस दावत में गयी। उन लोगों को वहाँ पहुँचने में देर हो गयी, इसलिए जब होनेवाली बहू के जेवर सबको दिखाये गये तो तारा न देख पाई।

तारा ने सुन रखा था कि जमींदार के पास एक दो लाख का हार है। तारा उस हार को स्वयं देखकर, सहेलियों को उसके बारे में बताना चाहती थी।

तारा ने जमींदार की लड़की सोना से अनुरोध किया कि वह उसे एक बार वह हार दिखा दे। सोना ने तारा को बुरी तरह झिड़क दिया। तारा को बड़ा ख़राब लगा। इधर दावत पूरे जोर पर थी। तारा ने देखा, कोने में एक बूढ़ा आदमी बैठा है। लेकिन कपड़े उसके ज़रा भी अच्छे न थे। उससे न कोई खाने को पूछ रहा था, न बात कर रहा था। तारा ने सोचा यह इनके घर का कोई पुराना नौकर होगा, जो शादी की बात सुनकर वहां बिना बुलाये आ गया है। तारा को उस पर दया आ गयी। उसने पूछा—"बाबा, तुम्हें खाने को यहीं लाकर दे दूं?"

बुड्ढे के सिर हिला कर हाँ करने पर तारा एक प्लेट में मिठाई आदि भर कर ले आई और उसके सामने रख दिया, बुड्ढे ने तारा से पूछा—"तुम उस लड़की से हार देखने के लिए कह रही थी। क्या तुम्हारी बहुत इच्छा है उसे देखने की।"

"देखना तो चाहती हूँ, मैं अपनी सहेलियों को उसके बारे में बताना चाहती हूँ।"

श्रीमती क्रांति त्रिवेदी

'मेरे साथ आओ, मैं तुम्हें दिखा दूं।"

"आप! आप कैसे दिखायेंगे?"

"तुम आओ तो सही। इस घर में कहाँ क्या रखा है, मैं सबसे ज़्यादा जानता हूँ।" तारा को विश्वास हो गया। हार देखने की उत्सुकता के कारण वह उसके साथ चली गयी। बुड्ढा उसे तीसरी मंजिल के एक कमरे में ले गया। एक दराज़ खोली, उसके अंदर से उसने मखमल का एक डिब्बा निकाला। उसमें वही दोलखा हार था। वह इतना सुंदर था कि तारा देखती ही रह गयी।

उसकी यह हालत देखकर बुड्ढे ने कहा—"लाओ, मैं तुम्हें इसका एक चित्र बनाकर दे दूं ताकि तुम अपनी सहेलियों को इसका चित्र भी दिखा सको। बुड्ढे ने जेब से एक काग़ज निकाला और उस पर हार का रेखा चित्र बनाकर तारा को दे दिया।

तारा को इस तरह चोरी चोरी हार देखने में बड़ा संकोच हो रहा था, और वह वहाँ ज़्यादा देर रुकना भी नहीं चाहती थी, इसलिए जब बुड्ढा उस हार को रखने जा रहा था, तभी वह अपने घर चली गयी।

जमींदार के यहां शादी को एक हफ़्ता बाक़ी था। एक दिन तारा अपने कमरे में बैठी पढ़ रही थीं कि जमींदार के घर से उसे कोई बुलाने आया। जमींदार के घर जाकर देखा तो वहाँ अजीब हाल था। जमींदार की बीबी पूछने लगी—"तारा, क्या तुमने दावत वाले दिन हमारे यहाँ

का दो लाख वाला हार देखा था? उषा कह रही थी कि तुमने उससे कहा है।"

तारा ने अपनी सहेली से बताया ज़रूर था कि किस तरह उसने हार देखने में सफलता पाई थी। उषा सोना की भी सहेली थी। उसने उसे बताया होगा। "जी हाँ मैंने देखा था।"

"अच्छा तो बताओ, कैसा था?" जमींदारिनी ने पूछा। तारा ने हार का सही रूप-रंग बता दिया। पूरी कहानी सुनने के बाद जमींदारिन ने कहा– "इसलिए मैं कहती थी, उस बुड्ढे को न बुलाओ। लगता है, बुढ़ापे में रुपये की कमी पड़ गयी तो चोरी करने लगे हैं। तभी वह कपड़े भी फटे पुराने पहने थे।"

"वह तो कह रहे थे कि वह इसी घर के हैं"। तारा डरते डरते बोली।

"घर के तो है हीं, वरना उन्हें उस अलमारी का पता नहीं चलता। वह तो उसी दिन बिना कुछ बताये, कहीं चले गये, पुलिस को ख़बर कर दी है, लेकिन पुलिस अब तक कुछ भी नहीं कर पाई है।"

तारा बहुत परेशान हो गयी। बुड्ढा आदमी इतना अच्छा था कि उसे चोर मानने का मन नहीं होता था। एक दिन वह अपनी एक क़िताब पलट रही थी कि उसने देखा, वही बुड्ढे का बनाया हार वाला चित्र पन्नों के बीच रखा है। तारा ने उस चित्र को पलटा तो उसमें लिखा था, गाँव नारायणपुर, जिला गोंडा, उ.प्र.।
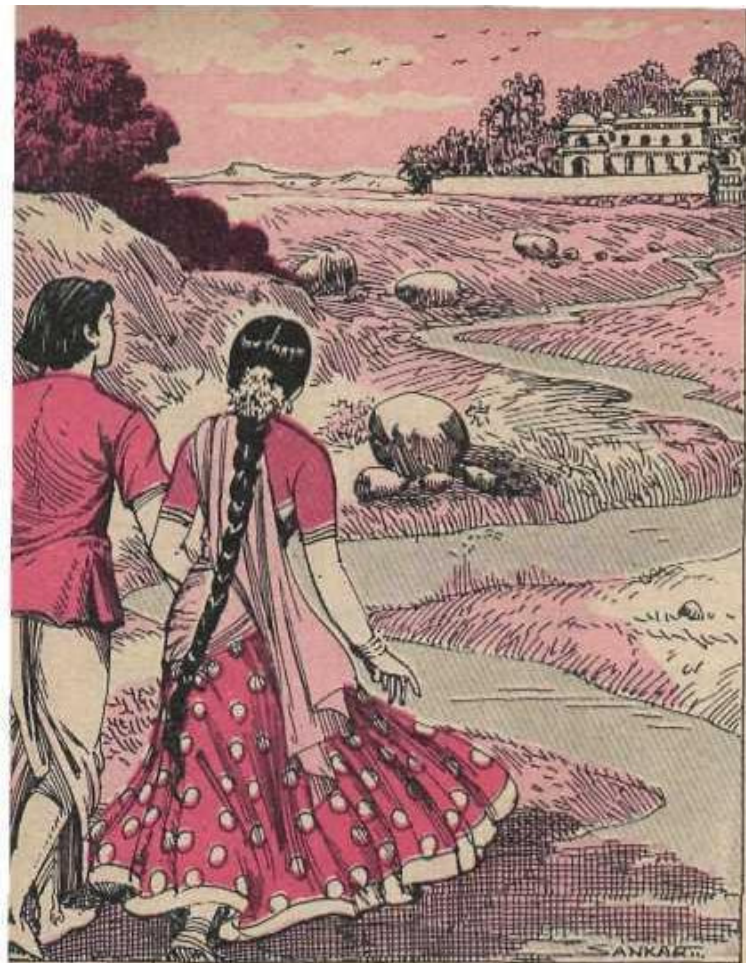
तारा के दिमाग में एकदम यह बात आई कि हो न हो बुड्ढा, जिसका नाम शिवशंकर सिंह था, इसी गांव को गया होगा। वह किसी को बताने से पहिले बुड्ढे से स्वंय बात कर लेना चाहती थी। उसे पूरा विश्वास था, बुड्ढा चोर नहीं हो सकता, चोरी का कोई और रहस्य होगा।

तारा ने अपने भाई को सारी बात बताई, फिर वे दोनों अपने माता-पिता की इजाज़त लेकर नारायणपुर चले। वहाँ जल्दी ही पता चल गया कि शिवशंकर सिंह नामक कोई आदमी यहाँ नहीं आया है। दोनों बैठकर सोचने लगे, अंत में तारा ने ही एक रास्ता निकाला।

बुड्ढा इस तरह गायब हो गया, तो ज़रूर ही कोई विशेष बात होगी? कहीं कोई एक्सींडेंट तो नहीं हो गयी? ऐसी बात है तो आसपास के अस्पताल देखने चाहिये। नारायणपुर व उसके आसपास के दो चार आस्पताल देखने के बाद एक आस्पताल में पता चला कि शिवशंकर सिंह तो नहीं लेकिन शिवसिंह नाम का एक बुड्ढा है। धड़कते दिल से दोनों ने आस्पताल में प्रवेश किया। सामने ही एक बिस्तर पर उस बुड्ढे को देख तारा ख़ुशी से उछल पड़ी। बुड्ढे भी तारा को देख बोला-"अस्पताल में सब मरीज़ों के रिश्तेदार आते हैं। मुझे देखने कोई नहीं आता, तुम आई, मैं ख़ुश हूँ।"

तारा पहिले तो इधर उधर की बातें उससे पूछती रही, फिर उसने उस हार के चोरी जाने और सबकी परेशानी की बात भी बता दी। तारा की बात सुनकर बुड्ढा 'हो हो' करके ख़ूब हँसा, फिर बोला-"मैं तो जिस दिन वहाँ से चला, इस गाँव में आकर एक साईकिल से टकरा गया था। मेरे पैर में चोट आई, इसलिए अस्पताल में रहना पड़ा। वे घमंडी लोग ख़ूब परेशान हो, यहीं तो मैं चाहता था।

"तुम परेशान हो रही हो, इसलिए बताये दे रहा हूँ, नहीं तो मैं उन्हें और

परेशान करता, आख़िर उन्होंने मेरा अपमान क्यों किया? पहिले तो मुझे निमंत्रण दिया, फिर मैं गंदे कपड़े पहिन कर चला गया तो मुझे गरीब समझ कर न ठीक से बात की, न खाने को पूछा। मैं तो उनकी परीक्षा लेने जान बूझकर गंदे कपड़े पहिनकर गया था। मैं ज़मींदार का सगा भाई हूँ, उन्हें हर हालत में मेरा यथोचित सत्कार करना चाहिये था।"

"हमने तो आपको उनके यहाँ पहले कभी देखा नहीं?" तारा ने पूछा।

"मैं वहाँ से बहुत पहिले बंबई चला आया था। व्यापार करके बहुत रुपया कमाया। अकेला आदमी हूँ, इसलिए जब बैंक में काफ़ी रुपया हो गया तो व्यापार करना छोड़ कर घूमता फिरता हूँ, परोपकार में व्यस्त रहता हूँ। मेरे रिश्तेदारों को शायद नहीं मालूम कि बैंक में मेरा दस लाख रुपया जमा है, खैर! बेटी, तुम इतनी दूर आई और पुलिस की झंकटों से मुझे बचाया, इसलिए मैं सारी बात तुम्हें बता रहा हूँ। मैंने वह हार उस घर की गुप्त अलमारी में से निकाल कर दूसरी अलमारी में रख दिया है। मैं उनको उनके दुर्व्यवहार की सज़ा देना चाहता था। बात पुलिस तक चली गयी है, तो लो एक कागज पर मैं नक्शा बनाये देता हूँ, तुम जाकर उन्हें दे देना, वे समझ जायेंगे।"

कुछ देर और बातें करने के बाद तारा और उसका भाई चले आये। आते समय उन्होंने नर्स से पूछा कि इन्हें किसी चीज़ या रुपयों की ज़रूरत हो तो हमें बता दें।

नर्स हँसकर बोली-"नहीं जी, यह बुड्ढा दिखने में ऐसा है। कल ही बंबई से इसके नाम पाँच हजार आये हैं। यह जानबूझ कर जनरल वार्ड में लेटा है। सब मरीजों को अपने खर्च से फल का रस पिलवाता है। आप निश्चित रहे, यह बहुत आराम से है।"

तीसरे दिन अखबारों में ख़बर छपी कि नारायणपुर के जमींदार का दो लखा हार लड़की ने खोज निकाला।

सोने की तलवार

एक दिन बादशाह अकबर अपने वजीरों के साथ घोड़ों पर शहर देखने चल पड़ा। एक गली में एक बूढ़ी औरत सड़क के किनारे खड़ी थी। उसके हाथ में एक तलवार थी। बादशाह ने उसके पास जाकर पूछा–"नानीजी, यह तलवार लिये तुम यहाँ क्यों खड़ी हो?"

"मैं ग़रीब हूँ, बेटा! इसलिए यह तलवार बेचना चाहती हूँ।" बूढ़ी ने उत्तर दिया।

अकबर ने उस तलवार को हाथ में लेकर उलट-पलटकर देखा। उसमें जंग लगी थी। बादशाह ने वह तलवार बूढ़ी के हाथ में दे दी। बूढ़ी ने बादशाह की ओर निराश भरी दृष्टि से देखा।

"तुम्हारा क्या मतलब है? निराश क्यों हो?" अकबर ने बूढ़ी से पूछा।

"बात कुछ नहीं, मैंने सुना है कि तुम जिस किसी भी चीज़ का स्पर्श करते हो, वह सोना हो जाती है। मगर मेरी बदक़िस्मती थी, इसलिए यह तलवार नहीं बदली।" बूढ़ी ने कहा।

बूढ़ी की अक़्लमंदी पर खुश होकर बादशाह ने उसे थोड़ा सोना दे दिया और आगे बढ़ गया।
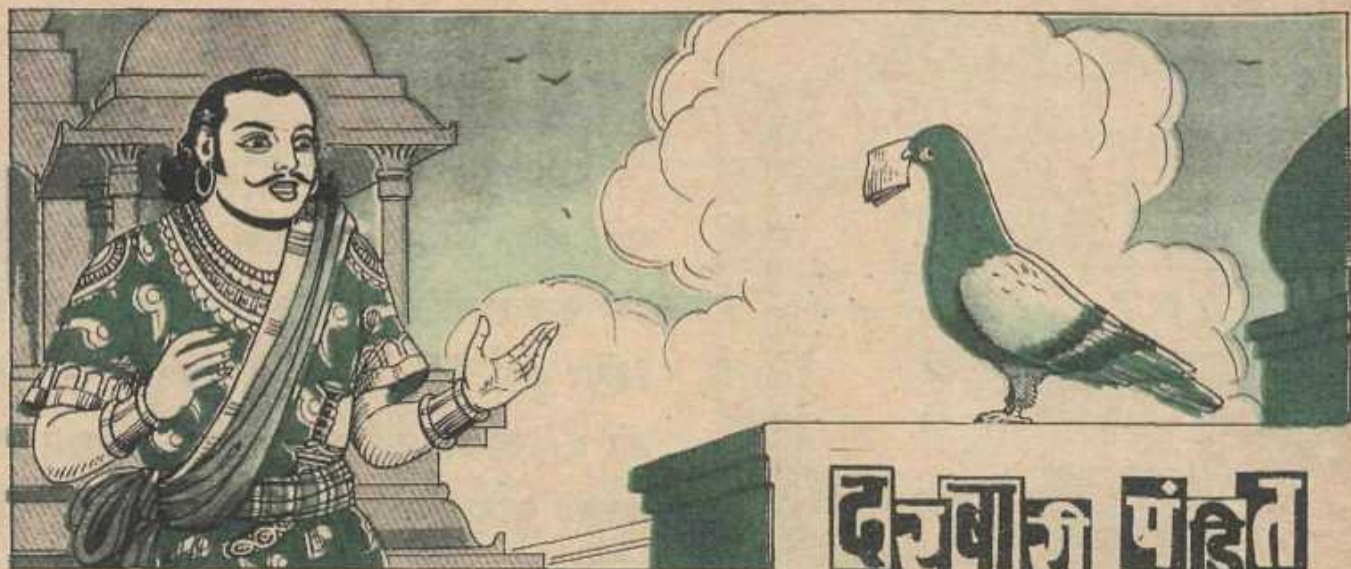
दरबारी पंडित

पुराने जमाने की बात है। वंग देश पर श्रीकेतु नामक राजा शासन करता था। पड़ोसी राज्य अंग देश के साथ उसकी दुश्मनी थी। अंग देश का राजा वंग देश को युद्ध में हरा नहीं सकता था। इसलिए उसने वंग देश के क़िले के गुप्त मार्गों का पता लगाकर धोखे से उस देश पर क़ब्ज़ा जमाना चाहा। इस प्रयत्न में उसने कुछ गुप्तचरों को वंग देश में भेजा। मगर वे गुप्तचर वंग देश के रहस्य जानने में असफल रहें।

उन्हीं दिनों में वंग देश का दरबारी पंडित मर गया। इसलिए वंग देश का राजा किसी दूसरे को अपने दरबारी पंडित नियुक्त करना चाहता था। अंग राजा ने इस मौक़े का फ़ायदा उठाना चाहा। उसने अपने अनुचरों में से एक पंडित अंगशात्री को श्रीकेतु के दरबार में भेजा।

राजा श्रीकेतु ने कई पंडितों की परीक्षा करके दो पंडितों को चुना। उनमें एक अंगशास्त्री था और दूसरा रामशास्त्री। रामशास्त्री वंग देश का निवासी था। राजा ने यह कहकर उन पंडितों को भेज दिया कि उन दोनों में से दरबारी पंडित के पद पर किसको नियुक्त किया जायगा, इसकी घोषणा कल करेंगे। उस दिन शाम को राजा श्रीकेतु अपने महल की छत पर टहल रहा था। उस समय वहाँ पर एक कबूतर उड़ता आया। उसके पैरों में एक चिट्ठी बंधी हुई थी। उसमें यों लिखा हुआ था :

"दरबारी पंडित के पद पर रामशास्त्री को ही नियुक्त किया जाय, वरना दुश्मन के द्वारा खतरा मोल लेना पड़ेगा। खबरदार!"

चेतावनी देनेवाले उस पत्र को पढ़कर राजा श्रीकेतु क्रोध में आया। उसने सोचा

दिनेश वर्मा
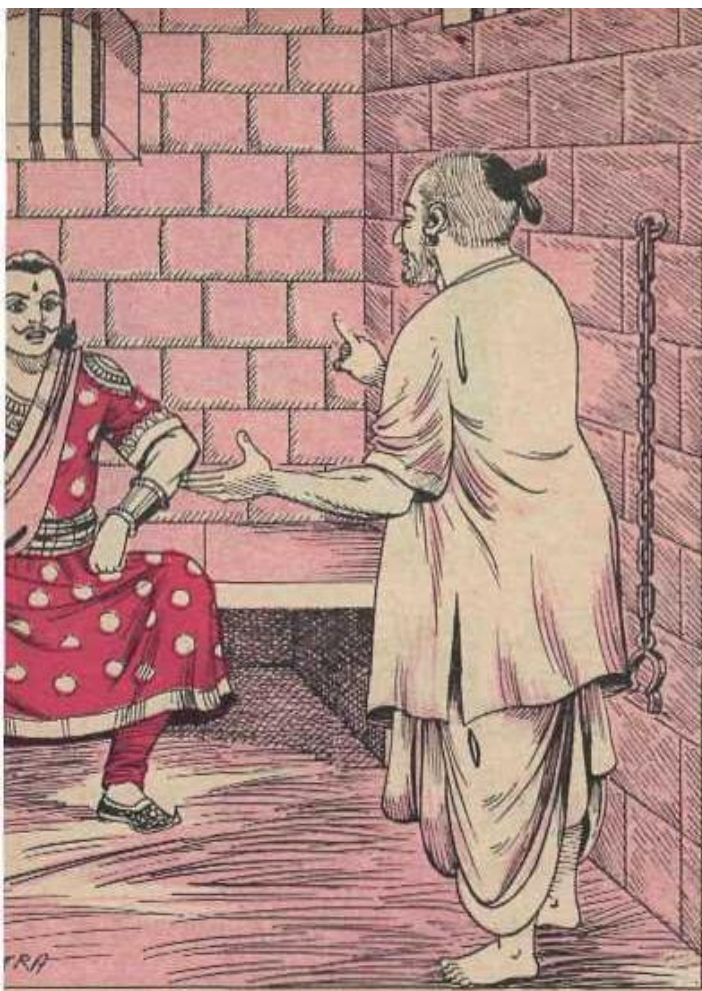
कि यह रामशास्त्री की ही करतूत होगी। उसने तुरंत अपने भटों को बुलाकर रामशास्त्री को कारागार में बन्दी बनाया। यह खबर दावानल की भांति सारे नगर में फैल गयी। अंगशास्त्री की चाल चली, इसलिए वह मन ही मन खुश था। क्योंकि वह चिट्ठी अंगशास्त्री ने ही भेज थी।

रामशास्त्री बिलकुल समझ नहीं पाया कि उसे कारागार में क्यों क़ैद किया गया है? उसने राजा से मिलने की अनुमति माँगी। उस दिन रात को राजा श्रीकेतु कारागार में रामशास्त्री को देखने गया। कबूतर के द्वारा प्राप्त चिट्ठी को रामशास्त्री के हाथ में देकर कहा–"तुम्हें क़ैद करने का कारण यही चिट्ठी है।"

रामशास्त्री ने चिट्ठी को सावधानी से पढ़ा और कहा–"महाराज, मेरा संदेह है कि इस चिट्ठी के पीछे कोई बड़ा षड़यंत्र छिपा हुआ है। मुझे यह चिट्ठी लिखने की ज़रूरत भी नहीं है। क्योंकि अंगशास्त्री सच्चा पंडित नहीं है। वह मुझसे स्पर्धा नहीं कर सकता। इसलिए मेरा विश्वास है कि दरबारी पंडित का पद मुझे अवश्य मिल जायगा। मुझे यह पद मिलने से रोकने के लिए किसी ने यह पत्र भेजा होगा। ऐसी जरूरत तो अंगशास्त्री के लिए ही है। आपको यह जान लेना आवश्यक है कि अंगशास्त्री दरबारी पंडित बनने के लिए क्यों लालायित है? वह हमारे देश का निवासी भी नहीं है।" रामशास्त्री की बातें सुनने पर राजा की आँखें खुल गयीं। उसने तुरंत रामशास्त्री को जेल से मुक्त करना चाहा।

"महाराज, मुझे थोड़े दिन तक कारागार में ही रहने दीजिये। अंगशास्त्री को किसी तरह का संदेह न हो, इसलिए आप उसको कल दरबारी पंडित के पद पर नियुक्त कीजिये। दिन-रात आप अंगशास्त्री पर समर्थ गुप्तचरों के द्वारा निगरानी रखवाइये। मेरा संदेह है कि वह हमारे शत्रु का

गुप्तचर है।" रामशास्त्री को क़ैद में रखने की वजह से राजा पछताते हुए उससे क्षमा माँगकर अपने महल को लौट आया।

दूसरे दिन अंगशास्त्री को राजा ने दरबारी पंडित के पद पर नियुक्त किया। उसके निवास का उचित प्रबंध किया और सेवा के लिए कुछ नौकरों को भी उसके पास भेजा। उनमें से अपने लिए आवश्यक कुछ रसोइयों तथा नौकरों को चुनने के साथ अंगशास्त्री ने एक भीमकाय व्यक्ति को भी अपने पास रखा। वह भीमकाय व्यक्ति एकदम बहरा था। ऐसे को अपने पास रखना अंगशास्त्री ने बहुत ही आवश्यक समझा।

जिस दिन अंगशास्त्री को दरबारी पंडित के पद पर नियुक्त किया गया, उसी दिन उसे देखने उसके निवास पर अंग देश के गुप्तचर आ पहुँचे। अंगशास्त्री ने उस बहरे भीमकाय व्यक्ति को छोड़ बाक़ी लोगों को किसी काम का बहाना करके भेज दिया। तब उन गुप्तचरों से कहा–"तुम लोग जाकर हमारे राजा से कह दो कि मैंने राजा के क़िले में अड्डा जमाया है।"

वास्तव में वह भीमकाय व्यक्ति बहरा न था। वह वंग देश के राजा श्रीकेतु के द्वारा नियुक्त गुप्तचरों का प्रधान था। पल भर के लिए वह बाहर गया और एक दूसरे गुप्तचर के द्वारा उसने राजा के पास यह खबर भेजी।

अंगशास्त्री को देखने आये हुए गुप्तचरों के जाने के पहले ही रामभटों ने आकर उन सबको बन्दी बनाया और क़ैद में डाल दिया।

उस दिन राजा ने रामशास्त्री को क़ैद से मुक्त किया और दूसरे दिन दरबार में राजा ने रामशास्त्री की युक्ति का सबको परिचय कराया और उसे दरबारी पंडित के पद पर नियुक्त किया।

अंगशास्त्री और बाक़ी गुप्तचरों ने राजा श्रीकेतु के सामने यह स्वीकार किया कि वे शत्रु राजा के द्वारा भेजे गये गुप्तचर हैं। इसके बाद सबको बन्दी बनाया गया।

मूर्ख बेटे

एक गाँव में एक अमीर के दो बेटे थे। मगर दोनों मूर्ख थे। एक दिन पड़ोसी गाँव के जमीन्दार का देहांत हो गया। अमीर आदमी की तबीयत ठीक न थी। इसलिए अपने बेटों को बुलाकर कहा–"तुम लोग जमीन्दार के घर जाकर संताप प्रकट करके आ जाओ।"

छोटे लड़ने के कहा–"पिताजी, मैं जमीन्दार के यहाँ जाऊँगा। यह बताइये, संताप कैसे प्रकट करना है?"

"अरे वहाँ जाओ, दस लोग जो बातें कहेंगे, तुम भी वे ही बातें कहो।" अमीर ने समझाया। छोटा पुत्र जमीन्दार के घर पहुँचा। तब पांच-दस आदमी बाहर खड़े कह रहे थे–"अच्छा हुआ कि यह दुष्ट मर गया। गाँव का पिण्ड छूट गया है।"

इसके बाद वह जमीन्दार की पत्नी के पास जाकर बोला–"माईजी! आप चिंता न करें, अच्छा हुआ कि वह दुष्ट मर गया। गाँव का पिंड भी छूट गया।"

इस पर जमीन्दार के बेटों ने उसे खूब मार-पीटकर भगा दिया।

छोटे के अपमान की बात सुनकर बड़ा भाई जमीन्दार की पत्नी के पास गया और बोला–"माईजी! मेरा छोटा भाई मूर्ख है, उसे क्षमा कीजिये। फिर ऐसी बात हुई तो मैं खुद आकर संताप प्रकट करूँगा।"

इस पर जमीन्दार के पुत्रों ने उसे भी मार-पीटकर भगा दिया। —एस. मोहन

चालाक चोर

वैशाली नगर में गजेन्द्र नामक एक डाकू था।

उसकी युक्ति की कहानियाँ लोगों में खूब प्रचलित थीं। वह अमीरों को लूटता और वह धन गरीबों में बाँट देता। इसलिए वह अमीर न बन सका। आखिर वह सचमुच धनी बन गया, मगर चोरी करने के द्वारा नहीं।

एक बार गजेन्द्र कहीं से चूना बनानेवाली कौड़ियाँ एक थैली में भरकर घोड़े पर जंगल के रास्ते वैशाली नगर को लौट रहा था। गजेन्द्र का घोड़ा बूढ़ा था, इसलिए वह थक गया था। जंगल के एक नुक्कड़ पर पहुँचते ही पेड़ों की आड़ में से एक लुटेरा अपने घोड़े पर गजेन्द्र के सामने आया और ललकार उठा–" वह थैली मेरे हाथ दोगे या मर जाओगे?"

गजेन्द्र उस लुटेरे की ओर सर से पैर तक देख बोला–"यह कमबख्त थैली क्या जान से प्यारी हो सकती है?" ये शब्द कहते उसने उस थैली को पास की कंटीली झाड़ियों में फेंक दिया।

"ऐसा घमण्ड! तेरी खबर लूँगा।" ये बातें कहते वह लुटेरा कंटीली झाड़ियों में थैली को खोजने के प्रयत्न में लग गया।

इस बीच गजेन्द्र अपने घोड़े से उतर पड़ा, लुटेरे के घोड़े पर छलांग लगाकर बैठ गया। घोड़ा अच्छी नस्ल का था। उसने जल्द गजेन्द्र को अपने घर पहुँचा दिया। उस घोड़े के जीन के नीचे गजेन्द्र को थोड़ा सोना भी मिल गया। लुटेरा अपने घोड़े और सोने को भी खोकर कौड़ियोंवाली थैली प्राप्त कर सका।

एक बार गजेन्द्र शहर की एक दूकान में गया और पूछा–"मुझे मिट्टी का एक बड़ा बर्तन चाहिए! दे दो।"

दूकानदार ने एक छोटा-सा बर्तन गजेन्द्र के हाथ में दिया। गजेन्द्र ने

कुमारी नलिनी

उसकी जाँच करके कहा–"इसमें तो छेद है।"

दूकानदार ने बर्तन को उलट-पलटकर देखा और कहा–"इसमें तो कहीं छेद दिखाई नहीं देता?"

"बाहर जाकर रोशनी में तो देखो, छेद क्यों नहीं है?" गजेन्द्र ने कहा।

दूकानदार बर्तन लेकर बाहर गया। उसे औंधे मुँह रखकर छेद को ढूँढ़ने लगा। गजेन्द्र ने झट उस बर्तन को दूकानदार के सर पर ढक दिया। दूकान की अच्छी अच्छी चीज़ें और रुपये लेकर यह कहते चला गया–"छेद न हो तो तुम्हारा सर उसमें कैसे फँस गया?"

एक बार गजेन्द्र ने एक अमीर लड़की को चोरों के चंगुल से बचाया। उसने गजेन्द्र के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हुए पूछा–"मैं आपके इस उपकार का बदला कैसे चुका सकती हूँ?"

"मेरे साथ शादी करो।" गजेन्द्र ने जवाब दिया। उस युवती को मालूम हो गया था कि गजेन्द्र धोखेबाज है और चोर है। साथ ही धनियों को लूटता रहता है, इसलिए उसने गजेन्द्र के साथ शादी करने से इनकार करते हुए कहा–"यह मुझसे न होगा।"

"मुझे तो तुम हल्का आदमी समझती हो? मैंने अपनी जिंदगी में कभी ऐसे वादे नहीं किये थे, जिनकी मैं पूर्ति नहीं कर सकता हूँ। इसलिए तुम्हारे साथ विवाह करना मेरे लिए भी अपमान की बात है।" यह कहकर गजेन्द्र ने उस युवती को भेज दिया।

यह बात जब उस युवती के पिता को मालूम हुई तब उसने अपनी बेटी को डांटा और गजेन्द्र के साथ उसका विवाह किया।

शादी होने पर गजेन्द्र ने चोरी करना छोड़ दिया। उसकी न्यायप्रियता की चर्चा लोग कई तरह से करने लगे। यह समाचार मिलने पर बैशाली नगर के राजा ने गजेन्द्र को अपने राज्य का न्यायाधीश नियुक्त किया।

मुनि दुर्वास तथा उसके एक हज़ार शिष्यों को बेवक़्त खाना कैसे खिलावे, यह बात द्रौपदी की समझ में न आयी। उसने कृष्ण का स्मरण किया, तत्काल उस वन में द्रौपदी के सामने कृष्ण प्रत्यक्ष हुये।

द्रौपदी ने कृष्ण के चरणों में प्रणाम करके कहा–"दुर्वासमुनि गंगानदी में स्नान करके अपने शिष्यों के साथ लौट आयेंगे और खाना मांगेंगे, अक्षय पात्र में एक दाना भी न रहा, मैं क्या करूँगी?"

"दुर्वास की बात भगवान जाने! मुझे तो इस समय भूख सता रही है। पहले मेरी भूख मिटाओ। इस के बाद तुम्हारी समस्या पर विचार करेंगे।" कृष्ण ने कहा।

द्रौपदी ने लजाते हुए उत्तर दिया–"जब तक मैं खाना न खाऊँ, तब तक अक्षय पात्र में खाना बचा रहेगा। मैं खा चुकी हूँ, अब पात्र में बिलकुल अन्न चुक गया है। आप ही मेरी परीक्षा ले, तो मैं क्या कर सकूँगी?" द्रौपदी ने पूछा।

"मैं भूख से परेशान हूँ और तुम्हें मजाक सूझ रहा है। तुम्हारे अक्षय पात्र में जो कुछ है, वही खिलाओ!" कृष्ण ने कहा।

द्रौपदी अक्षय पात्र ले आयी। उसके एक कोने में एक दाना चिपक गया था। कृष्ण ने उस दाने को निगल कर कहा–"अब मेरा पेट भर गया है।"

इस के बाद कृष्ण ने भीम को बुला कर कहा–"तुम गंगानदी के पास जाकर

३५. जयद्रद का पराभव

दुर्वासमुनि और उनके शिष्यों को जल्दी खाने केलिए बुला लाओ।"

भीम के वहाँ पहुँचने के पहले ही दुर्वास तथा उसके शिष्यों के पेट उफर आये थे शिष्यों ने दुर्वास से कहा–"गुरूजी! हमें लगता है कि हमारे पेट एकदम भर गये हैं। हमने नाहक़ युधिष्ठिर को रसोई बनाने के लिए कहा। अब हम एक दाना भी खा नहीं सकते! क्या करें?"

दुर्वास ने अपने शिष्यों से कहा–"हमने युधिष्ठिर के साथ अन्याय ही किया है। वे साधारण आदमी नहीं हैं। यदि हमारी ओर उन्होंने क्रोध भरी दृष्टि से देखा तो हम जल कर भस्म हो जायेंगे। एक बार अंबरीष के द्वारा मेरा इसी प्रकार अपमान हुआ है। अब हम युधिष्ठिर से कहे बिना भाग जायेंगे।" सब भाग खड़े हुए।

एक बार अंबरीष द्वादशी व्रत समाप्त करके ब्राह्मणों के साथ खाने के लिए बैठ ही रहा था, तभी दुर्वास आ पहुँचा। अंबरीष ने उसे भी खाने केलिए निमंत्रित किया। दुर्वास स्नान करने गये और बड़ी देर तक नहीं लौटे। द्वादशी की घड़ी समाप्त होने जा रही थी। उस के बाद भोजन करने से वे व्रत के फल से वंचित हो जायेंगे। अतिथि के आये विना भोजन करना पाप है। इसलिए अंबरीष ने मध्यम मार्ग को अपना कर जल पिया। दुर्वास विलंब से आया। उसने समझ लिया कि अंबरीष ने जल पिया है, इस पर क्रुद्ध हो उसने महा कृत्या की सृष्टि की और अंबरीष पर अक्रमण करने भेजा। तभी कहीं से विष्णु चक्र आया और कृत्या का वध करके दुर्वास का पीछा करने लगा। दुर्वास शिव और विष्णु के पास गया, पर वे उसे बचा न पाये, तब वह लौट कर अंबरीष के चरणों पर गिर पड़ा और अपने प्राण बचाये। यह दुर्वास केलिए न भुलाये जाने वाला एक अयुभव था।

भीम ने गंगा के तट पर पहुँच कर देखा, वहाँ एक भी आदमी दिखाई न दिया।

वहाँ पर स्नान करने वाले ब्राह्मणों ने बताया कि वे सब भाग गये हैं। भीम ने लौट कर यह बात युधिष्ठिर को बतायी। युधिष्ठिर यह सोचकर डर गया कि न मालूम दुर्वास कब आ धमके।

पर कृष्ण ने युधिष्ठिर को समझाते हुए कहा–"दुर्वास अब नहीं लौटेगा।" इस के बाद सारी कहानी सुनाकर कृष्ण पांडवों से विदा लेकर चले गये। पांडवों पर कृष्ण का अनुग्रह था, इसलिए कौरव उनकी हानि नहीं कर पाये।

थोड़ा समय और बीत गया। पांडव काम्यकवन में ही रहने लगे। एक दिन उन सबने शिकार खेलने जाने का निश्चय किया। शिकार से लौटने तक द्रौपदी को तृणबिंदु नामक ऋषि के आश्रम में रखा और सहायता केलिए अपने पुरोहित धौम्य को छोड़ गये।

उसी दिन जयद्रद सालव राजकुमारी के साथ विवाह करने केलिए थोड़ी सेना और अनेक राजाओं को साथ ले तृणबिंदु के आश्रम के निकट से जा रहा था। आश्रम निर्जन था। एक लतागृह के पास द्रौपदी खड़ी उसे दिखाई दी।

द्रौपदी को देखते ही जयद्रद की आँखें चमक उठीं। उसके मन में मोह पैदा हुआ। तब उसने कोटिकास्यु नामक राजकुमार को

बुला कर कहा–"सुनो, उस नारी को देखते हो न? उसे देखने पर मेरे मन में मोह पैदा हो रहा है। मुझे अब सालव राजकुमारी नहीं चाहिये। तुम जल्दी जाकर यह पता लगाओ, वह नारी किसकी पुत्री है, किसकी पत्नी है और मेरे साथ चलने को तैयार है कि नहीं।"

कोटिकास्य भी दुष्ट प्रकृति का था। उसने द्रौपदी के पास जाकर कहा–"सुंदरी, तुम कौन हो? किस जाति की हो? तुम्हारा नाम क्या है? इस जंगल में अकेली क्यों रहती हो? तुमने हमारा परिचय नहीं पूछा, फिर भी बता देता हूँ। मैं सुरथ राजकुमार हूँ। मेरा नाम
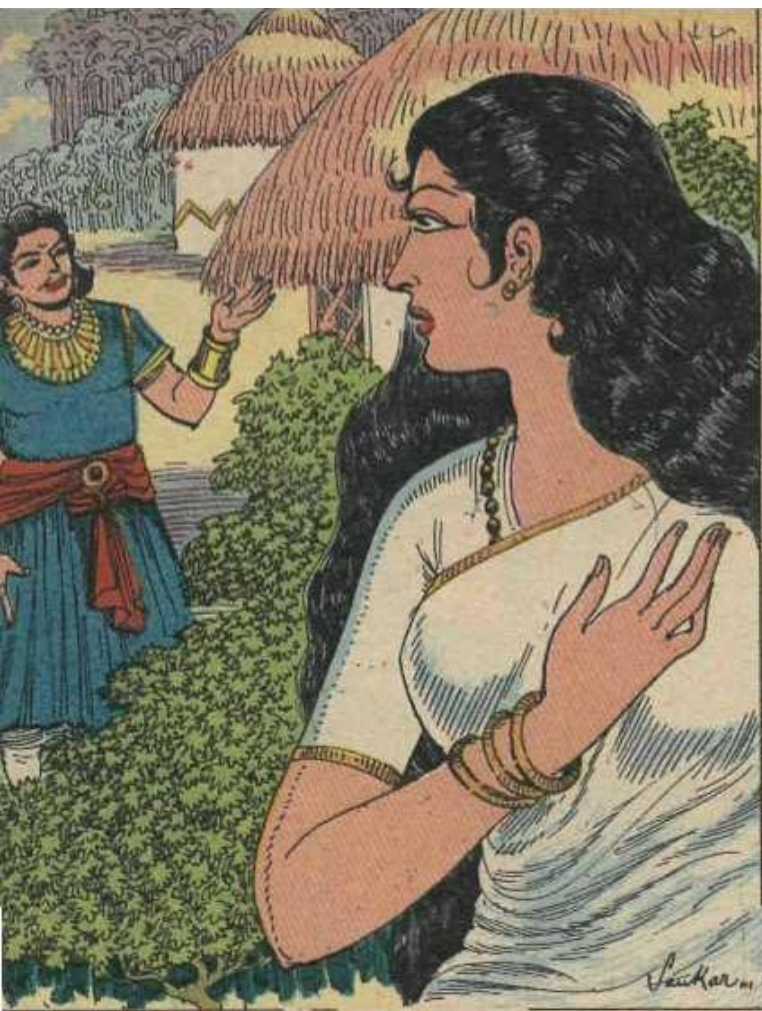
कोटिकास्य है। सामने दिखाई देने वाले राजा हैं, त्रिगर्त राजा, कुलिंदराजा और सुबल राजकुमार हैं। बारह राजाओं के बीच प्रकाशमान रथ पर बैठे सिंधु और सौवीर देशों के राजा जयद्रद ने ही तुम्हारा परिचय जानने के लिए मुझे भेजा है।"

द्रौपदी ने उस राजकुमार से कहा–"मैं जानती हूँ कि तुम कौन हो। मुझ जैसी कुलीन नारियों को तुम से बातचीत नहीं करनी है। मगर तुम्हारे सवालों का जवाब देने के लिए यहाँ पर कोई नहीं है। इसलिए लाचार होकर मैं ही उत्तर दे रही हूँ। मैं राजा द्रुपद की पुत्री हूँ। मेरा नाम कृष्णा है। पांडव मेरे पति हैं। वे इस समय शिकार खेलने गये हुये हैं। शीघ्र लौट आवेंगे। उन के आने तक ठहर कर हमारे अतिथि-सत्कार पाकर तब चले जाइये। वे भी प्रसन्न हो जायेंगे।"

इसके बाद उन सबका अतिथि-सत्कार करने के ख्याल से द्रौपदी कुटी के भीतर चली गयी। कोटिकास्य ने जाकर सारा समाचार जयद्रद को सुनाया।

"मैं यह मान नहीं सकता कि वह मानवी है। उस को जिन आँखों से मैं ने देखा, उन आँखों से दूसरी नारी को देख नहीं सकता।" जयद्रद ने कहा।

"तब तो उस नारी को रथ पर बिठा कर आपने नगर को लौट जाओ।" कोटिकास्य ने सुझाव दिया।

जयद्रद रथ से उतर पड़ा। छे राजाओं को साथ लेकर कुटीर में चला गया और द्रौपदी से पूछा–"तुम और तुम्हारे पति कुशाल हो न?"

द्रौपदी ने उसके कुशल-समाचार जान कर अर्घ्य एंव पाद्य दिये। उसके बैठने के लिए आसन दिखाया और बोली–"पांडव शीघ्र शिकार से लौट कर आप लोगों को मांस के साथ खाना खिलायेंगे।"

"आतिथ्य की बात छोड़ दो। मेरे रथ पर हमारे नगर में चलो। सैं तुमको अपनी पत्नी बना कर पूर्ण सुख दूंगा।

राज्य से वंचित पांडवों के साथ तुम इस जंगल में यातनाएँ क्यों भोगती हो? सिंधु और सौवीर देशों पर तुम्हीं शासन करो।" जयद्रद ने कहा।

द्रौपदी को असहनीय क्रोध आया। अपने पतियों के लौटने तक उन लोगों को बातों में लगाये रखना चाहा और बोली–"तुम भी कैसे मूर्ख हो। मेरे पति इंद्र से किसी बात में कम नहीं। उन्हें क्रोध दिलाना तुम्हारे लिए हानिकारक होगा।"

"पांचाली, तुम पांडवों की वीरता की बातें हमें नये ढ़ंग से सुनाकर डराना चाहती हो? ये सब व्यर्थ की बातें हैं। सुनो, इस संसार में जो सत्रह श्रेष्ठ कुल हैं, उन में हमारा एक है। यूँ ही हमको बातों में न लगा कर मेरे साथ चलो। यह मत समझो कि मैं पांडवों से डरकर तुमको छोड़ जाऊँगा।" जयद्रद ने कहा।

द्रौपदी क्रोध में आकर बोली–"अरे दुष्ट! तुम यह सोचते हो कि पांडवों की पत्नी इतनी बड़ी आसानी से तुम्हारे हाथ लगेंगी। तुम्हारे पीछे अर्जुन रथ पर आकर तुम्हें दावानल की तरह भस्म न कर बैठेंगे? मुझे ले जाना इंद्र के लिए भी संभव नहीं है। तुम किस खेत की मूली हो? यह तो तुम्हारा भ्रम है कि मैं तुम्हें वर लूँगी। मैं महान पतिव्रता हूँ। मेरा

मन पांडवों को छोड़ अन्य लोगों पर कभी नहीं जायगा।"

इस पर जयद्रद के साथ आये हुए लोग द्रौपदी को पकड़ने को हुये। द्रौपदी उन से बच कर जोर से इस तरह चिल्ला उठी ताकि उस की आवाज़ धौम्य को सुनाई दे। पर जयद्रद उसे दोनों हाथों से उठाये भागने लगा। द्रौपदी की चिल्लाहट सुनकर धौम्य जयद्रद के पीछे दौड़ने लगा। वह भी चिल्लाता जा रहा था। तब जयद्रद द्रौपदी को रथपर बिठाये निकल पड़ा।

धौम्य ने जयद्रद से कहा–"जयद्रद, यह कैसा नीच काम है? तुम में हिम्मत हो तो द्रौपदी के पतियों को हराकर उसे ले जाओ।

लेकिन परायी नारी को इस तरह कहीं ज़बर्दस्ती ले जाना पाप है।" पर जयद्रद ने धौम्य की बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया। रथ को तेजी क़े साथ दौड़ाने लगा। धौम्य रथ के पीछे दौड़ते जा रहा था।

इस बीच पांडव कुछ जानवरों का शिकार करके एक जगह मिले और सब आश्रम की ओर चल पड़े। आश्रम में जाकर देखा, द्रौपदी गायब थी। सारथी इन्द्रसेन ने धात्रेयिका नामक दासी को रोते हुये देखा। उसने इन्द्रसेन को बताया कि द्रौपदी को जयद्रद ज़बर्दस्ती रथ पर ले गया और यह घटना थोड़ी ही देर पहले हुई है।

युधिष्ठिर ने धात्रेयिका को सांत्वना दी और अपने भाइयों को जयद्रद पर हमला करने के लिए चलने को कहा। पांचों पांडव रथों पर सवार हो उसी रास्ते से चले जिस रास्ते जयद्रद गया था। जल्द ही उन्हें रास्ते में दूर पर धूल उड़ते दिखाई दी। फिर थोड़ी देर बाद रथों के पीछे दौड़ने वाला धौम्य उन्हें दिखाई दिया। दौम्य को धीरे से चलने की सलाह दे कर वे लोग जयद्रद की सेना पर इस तरह टूट पड़े जैसे चील मांस पर झपटता है।

सेना के बीच रथ पर जयद्रद के साथ द्रौपदी को देख पांडवों का क्रोध उबल पड़ा। "ठहर जाओ।" चिल्लाते पांडव जयद्रद के रथ के निकट पहुँचे। उन्हें देख जयद्रद के साथी डर गये।

द्रौपदी ने जयद्रद से कहा–"देखो, मेरे पति आ रहे हैं। तुम्हें और तुम्हारी सेना का वे सर्वनाश कर बैठेंगे। तुम्हारी मौत निकट आ गयी थी, इसलिए तुमने यह दुष्टता की। इस वक़्त यदि तुम जिंदा रहोगे तो समझना होगा कि तुम्हारा पुनर्जन्म ही हो गया है।"

पांडवों ने जयद्रद की सेना पर बाणों की वर्षा की। सैनिक तितर-बितर होने लगे। भीम गदा उठाये जयद्रद पर टूट पड़ा तो कोटिकास्य ने उसे रोका। उसकी मदद
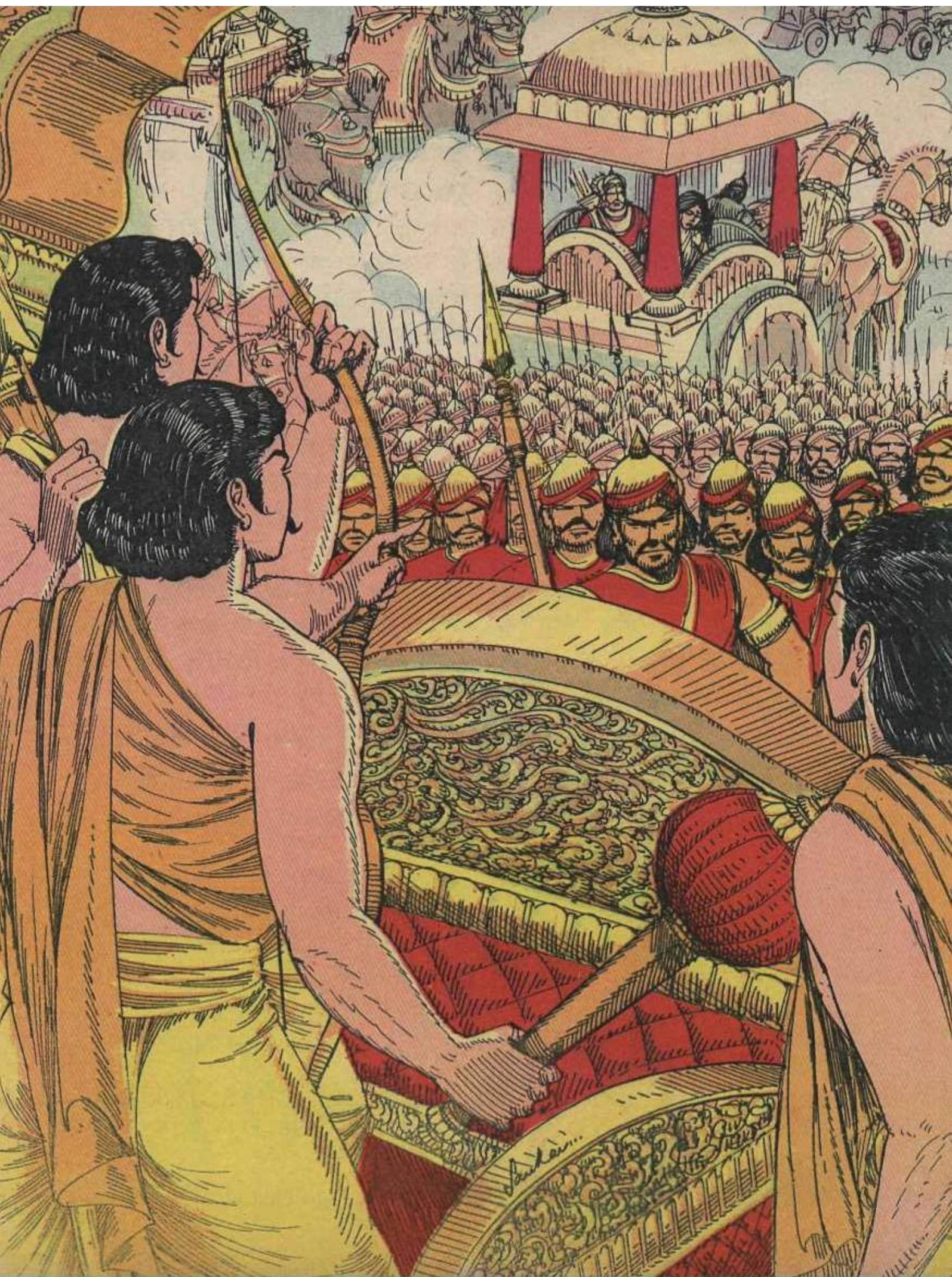
के लिए कई योद्धा आये और भीम पर तरह-तरह के हथियारों का प्रहार करने लगे। अर्जुन जयद्रद के रथ पर आक्रमण करने गया तो बीच में पंद्रह वीरों ने उसका सामना किया। अर्जुन ने उन सबको मार डाला। युधिष्ठिर ने सौ सौवीरों को मारा। नकुल रथ से उतर कर सैनिकों का वध करने लगा। सहदेव ने हाथियों पर सवार सभी योद्धाओं को मार डाला। त्रिगर्त राजा युधिष्ठिर के हाथों में मार डाला गया।

इस प्रकार जयद्रद के दल के अनेक लोग मर गये। कोटिकास्य डर कर भाग गया। आखिर लाचार होकर जयद्रद द्रौपदी को रथ पर छोड़ अपनी जान बचाने भाग खड़ा हुआ। अर्जुन ने यह बात भीम को बतायी। भीम ने सैनिकों को मारना छोड़ युधिष्ठिर से कहा–"भैया, आप द्रौपदी तथा धौम्म को अपने रथ पर चढ़ा कर आश्रम में ले जाइये। मैं और अर्जुन जाकर जयद्रद का खात्मा करेंगे।"

"भीम, जयद्रद भले ही दुष्ट हो, पर उसे मार न डालो। क्यों कि दुश्शला को तुम विधवा न बनाओ जिससे गांधारी को दुख न हो।" युधिष्ठिर ने इस प्रकार भीम को सचेत किया, पर द्रौपदी ने कहा कि जयद्रद को प्राणों के साथ छोड़ना नहीं चाहिये। इसके बाद युधिष्ठिर आश्रम को लौट आये।

एक कोस की दूरी पर भीम और अर्जुन ने जयद्रद को पकड़ लिया, उसका सर मुँड़वा कर उसे विकृत बनाया गया। उसे अपने रथ पर बन्दी बनाकर दोनों भाइयों ने अश्रम में लाकर युधिष्ठिर के चरणों पर डाल दिया।

"आज से तुम जहाँ भी जाओ, अपने को पांडवों का दास बताकर जिओ।" ये शब्द कहकर द्रौपदी की अनुमति से भीम ने उसे छोड़ दिया।

"अइंदा तुम कभी ऐसा नीच काम न करो।" इस तरह डांटकर युधिष्ठिर ने जयद्रद को वापस भेज दिया।
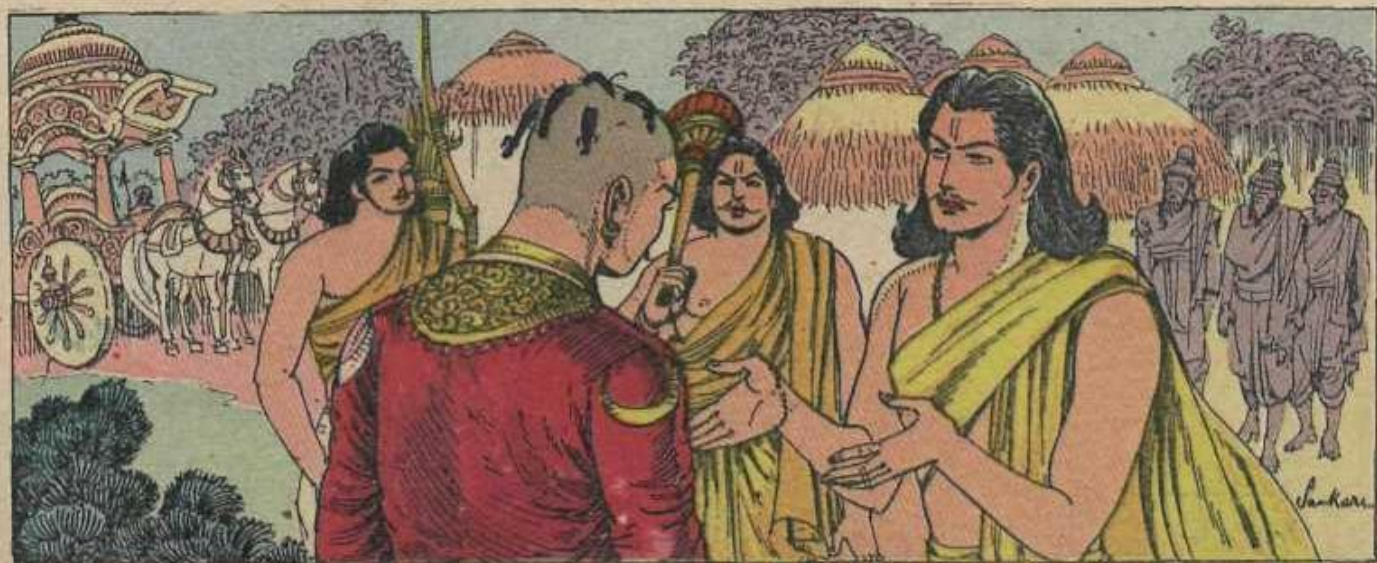
शिवपुराण

[१२]

शिवजी का आदेश पाकर नंदीश्वर ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र आदि देवता तथा गंगातट से कुमारस्वामी को भी कैलास में बुला लाया। कुमारस्वामी अपनी छे माताओं के साथ पुष्पक विमान में आ पहुँचा। पार्वती और परमेश्वर ने आगे बढ़कर कुमारस्वामी का आलिंगन किया और अपने पास बिठाया।

उस वक़्त ब्रह्मा ने कुमारस्वामी के निकट खड़े हो कहा—"पार्वती और परमेश्वर, आज यह कुमार कैलास में आया है। कल देवताओं के सेनापति के रूप में इसका अभिषेक करना उत्तम होगा।"

इस पर सब लोग प्रसन्न हुये। पार्वती और परमेश्वर ने सबके समक्ष कुमारस्वामी का उपनयन किया। इसके बाद ब्रह्मा ने पुरोहित बन कर कुमास्वामी का देवताओं के सेनापति के रूप में अभिषेक किया।

इस पर पार्वती और परमेश्वर ने कुमारस्वामी से कहा—"बेटा, तुम इस वक़्त देवताओं के सेनापति हो! तुम देवेन्द्र की सहायता करते हुए तीनों लोकों की रक्षा करो। दुष्ट और पापियों का संहार करो। सब लोकों का उपकार करके यश पाओ।"

स्वर्ग में विश्वकर्म के द्वारा कुमारस्वामी के लिए सुंदर भवन बनवाये गये। इसके उपरांत पार्वती और परमेश्वर ने अपने पुत्र से कहा—"बेटा, तुम्हारे लिए महल तैयार हैं। तुम उसमें निवास करो।"

पार्वतीदेवी ने कुमारस्वामी के लिए देवी गण भी दिये। देवताओं ने उसे अनेक वर दिये और अस्त्र-शस्त्र देकर तारकासुर का संहार करने का आशीर्वाद दिया।

अंतिम पृष्ठ का चित्र

उनका सामने करने के लिए आवश्यक तैयारियाँ कर दो ।"

इसके बाद शिवभक्त ताराकासुर ने पार्थिव लिंग तयार किया और पूजा के लिए आवश्यक नारियल, पंच बिल्व पत्र, पंचामृत, फल, फूल एवं सुगंधित द्रव्यों से पूजा–अर्चना की, अभिषेक, धूप एवं नैवेद्य देकर प्रार्थना की–"हे ईश्वर, मैं ने तुम्हारी पूजा की, तुम इसका फल प्रदान करो ।" तदुपरांत भक्ति के साथ प्रणाम किया ।

उधर स्वर्ग में कुमारस्वामी ने देवताओं के गुरु ब्रहस्पति द्वारा निश्चित किये गये मुहूर्त पर रण-भेरी बजवायी । देव, रुद्र, वीरभद्र तथा देवी गणों के साथ युद्ध के लिए चल पड़ा । उसे सर्वत्र शुभ शकुन दिखाई दिये । कुमारस्वामी देवेन्द्र इत्यादि को साथ लेकर युद्ध के लिए चल पड़ा ।

कुमारस्वामी देवेन्द्र इत्यादि के साथ शोणितपुर पहुँचा, नगर को घेरकर शिविर का प्रबंध किया । वह शिविर में बैठकर बोला–"बड़ों का कहना है कि युद्ध के पूर्व संधि का प्रयत्न करना उत्तम है। इसलिए हम समझौते के लिए एक दूत को भेज देंगे। आप लोगों की क्या सलाह है?"

इस पर देवेन्द्र इत्यादि ने मान लिया । तब कुमारस्वामी ने अपने वक्षस्थल से

तब कुमारस्वामी ने पार्वती-परमेश्वर, ब्रह्मा, विष्णु, इंद्रादि देवताओं को प्रणाम करके अपने गणों को आदेश दिया–"तुम लोग तारकासुर के नगर पर घेरा डालने की सारी तैयारियाँ कर दो ।" फिर रणभेरी बजवाकर स्वर्ग में अपने लिए निर्मित महलों में प्रवेश किया ।

उधर शोणितपुर में ताराकासुर को यह समाचार मिला कि कुमारस्वामी देवताओं का सेनापति बनकर उसें मारने के लिए तैयार है । तारकासुर ने अपने मंत्री व सेनापतियों को बुलवा कर कहा–"मुझे गुप्तचरों के द्वारा मालूम हो गया कि हमारे नगर पर हमला होने वाला है । तुम लोग

उत्पन्न विशाख को देख कहा–"विशाख, तुम तारकासुर के दरबार में जाकर मेरा संदेश सुनाओ और उससे उत्तर लेकर शीघ्र लौट आओ।" इसके बाद कुमारस्वामी ने विशाख को भलीभांति अपना संदेश सुनाकर भेज दिया।

विशाख जब ताराकासुर के दरबार में पहुँचा तब वह अपने नगर के घेरे के बारे में परामर्श कर रहा था। उस ने विशाख को देख पूछा–"तुम कौन हो? किस काम से आये हो?"

विशाख ने उत्तर दिया–"हे ताराकासुर, तुम शिवभक्त हो। शिवजी के पुत्र कुमारस्वामी ने मुझे तुम्हारे पास दूत बनाकर भेज दिया है।"

तारकासुर ने प्रसन्न हो विशाख को बिठाया और पूछा–"कुमारस्वामी ने मुझे कौन-सा संदेश दिया है? मेरे शत्रु तो देवता हैं, पर कुमारस्वामी नहीं।"

"तारकासुर! तुमने बहुत समय से तीनों लोकों पर शासन किया, लेकिन तुम्हारे शासनकाल में लोग सुखी नहीं रहें। इसलिए तुम उस अधिकार को इन्द्र को छोड़ भोगवतीपुर में चले जाओ। वरना कुमारस्वामी तुम्हें तथा तुम्हारे अनुचरों का वध करके इन्द्र को तुम्हारा अधिकार सौंप देंगे। कुमारस्वामी ने मेरे द्वारा तुम्हें यही संदेश सुनाने को कहा है।" विशाख ने उत्तर दिया।

तारकासुर ने क्रोध में आकर कहा–"मैं डर करके युद्ध से विमुख होने वाला नहीं हूँ। कल सवेरे युद्ध भूमि में कुमारस्वामी को मुझसे मिलने को कह दो।" तारकासुर के मंत्रीयों ने भी संधि करने के लिए स्कीकृति नहीं दी।

दूसरे दिन सूर्योदय तक दोनों पक्षों की सेनाएँ युद्ध के लिए तैयार हो गयीं। दोनों पक्षों के सैनिकों ने जी तोड़ कर युद्ध किया। तारकासुर की ओर से बाणासुर, प्रंलबासुर, जंभासुर, अतिबल, शंभासुर कुंभासुर इत्यादि वीर थे। कुमारस्वामी के पक्ष में

वीरभद्र, अग्निहोत्र, धर्म, सूर्य, चन्द्र वगैरह थे।

कई दिनों तक युद्ध चलता रहा, मगर नरकासुर के हारने के लक्षण दिखाई न देते थे। देवता तो एक दम कमज़ोर होते जाते थे। उनकी हिम्मत बिलकुल छूटती जा रही थी। तब कुमारस्वामी ने पाशुपतास्त्र का प्रयोग किया। वह अस्त्र तारकासुर की सेना पर हज़ारों बिजलियों की भांति गिर पड़ा। इससे तारकासुर की सेनाएँ तितर-बितर हो गयीं। जो सैनिक वहीं रहें, वे सब जलकर भस्म हो गये।

इस पर तारकासुर क्रोधित हो घर पहुँचा। शिवपंचाक्षरी मंत्र का जाप करके ध्यान करने लगा, तब आकाशवाणी सुनाई दी–"तारकासुर, तुम चिंता न करो, तुम्हें मोक्ष प्रदान करुँगा।" तारक ने पूजा समाप्त की और अपने कंठ में लिंग धारण किया। दूसरे दिन वह फिर युद्ध भूमि में चला आया।

कुमारस्वामी ने तरकासुर के साथ युद्ध किया। उसने कई अस्त्रों का प्रयोग किया पर तारक पर उनका ज़रा भी असर न हुआ। कुमारस्वामी को इस रहस्य का पता न चला। तब नारद ने कुमारस्वामी को बताया कि जब तक तारकासुर के कंठ में ईश्वरलिंग होगा तब तक कोई भी अस्त्र उसकी हानि नहीं कर सकेगा।

इन बातों को युद्ध क्षेत्र में स्मरण रखकर कुमारस्वामी ने अपने आग्नेयास्त्र का तारकासुर के कंठ में स्थित शिवलिंग पर प्रहार किया। वह लिंग टूटकर पांच टुकड़े बनकर नीचे गिर पड़ा। सूर्य, विश्वकर्म इत्यादि ने तुरंत उन टुकड़ों को ले जाकर पांच प्रदेशों में प्रतिष्ठापित किया। वे ही पंच भीम लिंगेश्वर हैं।

तारकासुर के कंठ का लिंग जब टुकड़ों में गिर गया तब कुमारस्वामी ने तारक पर अपने ब्रह्मास्त्र का प्रयोग कर उस का संहार किया। देवी गण तारक की सेनाओं का संहार करते, रक्त एवं मांस खाते नृत्य करने लगे, देवताओं ने पूलों की वर्षा की।
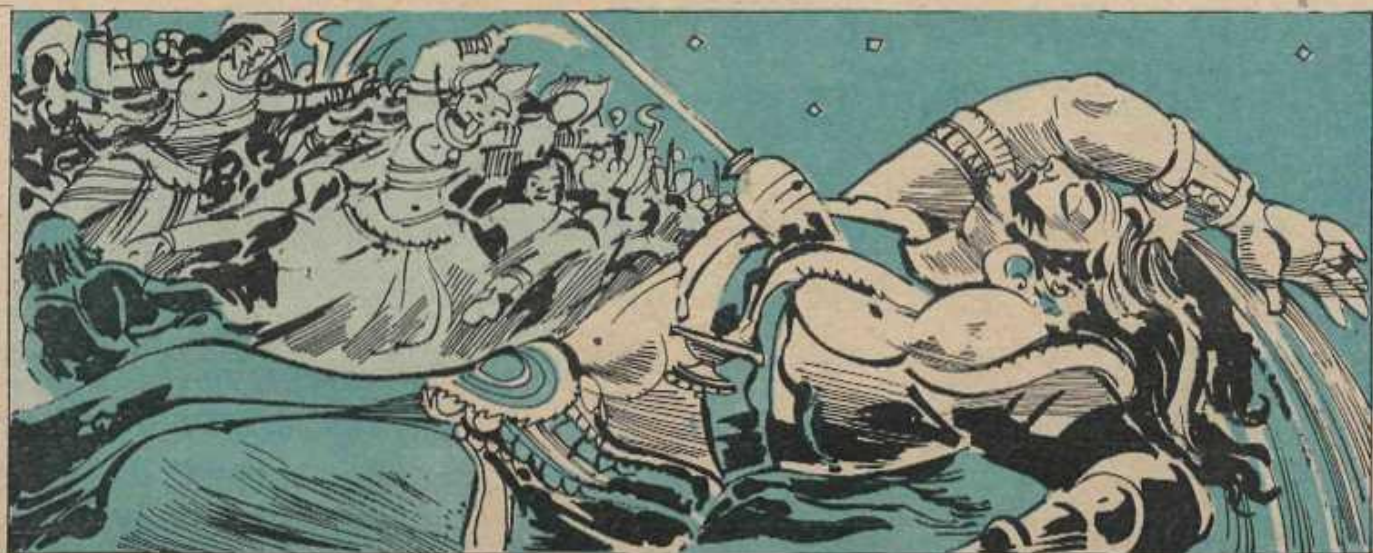
१२२. होवर बांध

कोलाराड़ो नदी पर निर्मित इस बांध की ऊँचाई ७२६ फुट है। (चित्र में सफ़ेद सीपी जैसी इमारत) उसके बायीं ओर निवाड़ा राज्य है, दायीं दिशा में आरिजोना है। बांध के ऊपरी भाग पर जो सड़क बनी है, वह इन दोनों राज्यों को मिलाती है। बांध के नीचे निर्मित छोटी इमारत विद्युत का केन्द्र है। उसकी ऊँचाई बीस मंजिल की ऊँचाई के बराबर है।

Photo by Shantaram R. Shinde
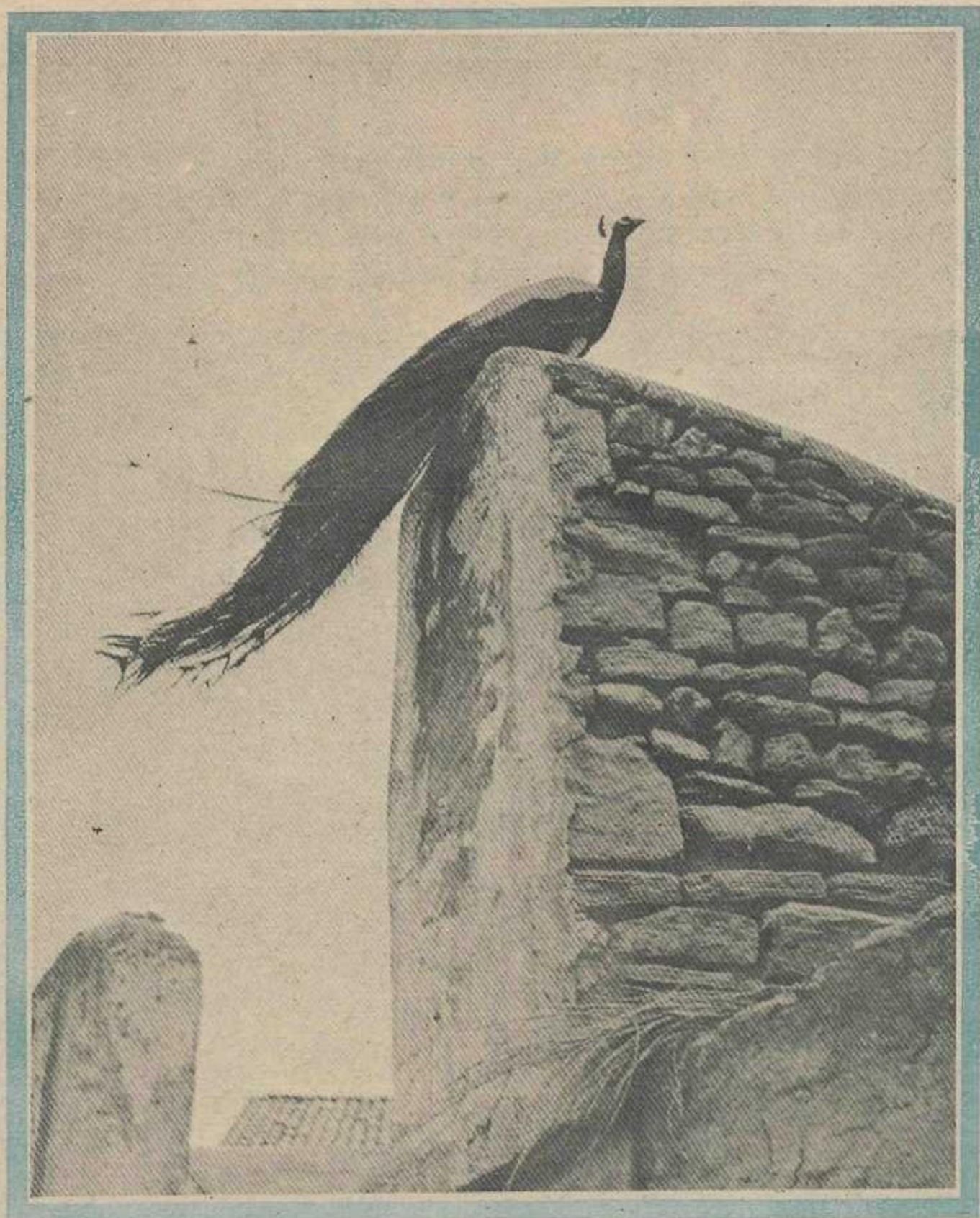
पुरस्कृत
परिचयोक्ति

राष्ट्र का प्रतीक हूँ।

प्रेषक :
सुरेन्द्र सिंह

Photo by Nivas G. Jadhav

न्यू लाइन एल १८/१०
मौभण्डार, सिंगबम

महादेव का मीत हूँ।

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २०)

★

★ परिचयोक्तियाँ फ़रवरी ५ तक प्राप्त होनी चाहिए।

★ परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबंधित हों, पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ अप्रैल के अंक में प्रकाशित की जायंगी!

चन्दामामा

इस अंक की कथा-कहानियाँ-हास्य-व्यंग्य

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Chandamama Publications, 2 & 3. Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

चन्दामामा के ग्राहकों को सूचना

यदि आप अपना पता बदल रहे हों, तो पाँचवीं तारीख़ से पहिले ही अपनी ग्राहक-संख्या के साथ, अपना नया पता सूचित कीजिये। यदि विलम्ब किया गया, तो अगले मास तक हम नये पते पर 'चन्दामामा' न भेज सकेंगे। आपके सहयोग की आशा है।

डाल्टन एजन्सीस, मद्रास - २६
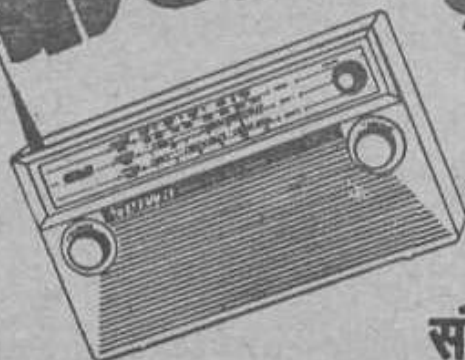
पूरे परिवार के स्वास्थ्य के लिए—

फ़ॉस्फ़ोमिन

विटामिन बी-कॉम्पलैक्स तथा विविध ग्लिसरो-फॉस्फेटसयुक्त फ़ॉस्फ़ोमिन पूरे परिवार को सबल, स्वस्थ और स्फूर्तियुक्त रखने के लिए आदर्श टॉनिक है। घर में फ़ॉस्फ़ोमिन हो तो थकान और सुस्ती नाम को भी नहीं टिक पाती। फ़ॉस्फ़ोमिन से नयी शक्ति मिलती है, भूख बढ़ती है, अधिक काम करने की शक्ति प्राप्त होती है तथा शरीर रोगों का मुकाबला करने के योग्य बनता है। फ़ॉस्फ़ोमिन पूरे परिवार को स्वस्थ और तरो-ताजा रखता है।

फलों के स्वादवाला, हरे रंग का विटामिन टॉनिक—फ़ॉस्फ़ोमिन

SQUIBB **Sarabhai Chemicals**

® ई. आर. स्क्विब एण्ड सन्स इन्कॉर्पोरेटेड का रजिस्टर्ड ट्रेडमार्क है। करमचन्द प्रेमचन्द प्राइवेट लि. को इसे उपयोग करने का लाइसेन्स प्राप्त है।

Shilpi HPMA-31A/71 Hin.

dCP/GLT/6b hin

Photo by : SURAJ N. SHARMA